शैक्षिक मंथन

(द्विभाषी मासिक)

शैक्षिक क्षेत्र की प्रतिनिधि पत्रिका

वर्ष : 9 अंक : 6   1 जनवरी , 2017

(पौष-माघ, विक्रम संवत् 2073)

संरक्षक

मुकुन्द कुलकर्णी
प्रो.के.नरहरि

❖

परामर्श

डॉ. विमल प्रसाद अग्रवाल
प्रो. जगदीश प्रसाद सिंघल

❖

सम्पादक

प्रो. सन्तोष पाण्डेय

❖

सह सम्पादक

विष्णुप्रसाद चतुर्वेदी
भरत शर्मा

❖

संपादक मंडल

प्रो. नन्दकिशोर पाण्डेय
डॉ. नाथू लाल सुमन
डॉ. एस.पी. सिंह
डॉ. ओमप्रकाश पारीक

❖

प्रबन्ध सम्पादक

महेन्द्र कपूर

❖

व्यवस्थापक

बजरंग प्रसाद मजेजी

प्रेषण प्रभारी

बसन्त जिन्दल
नौरंग सहाय भारतीय

कार्यालय प्रभारी

आलोक चतुर्वेदी : 9782873467

प्रकाशकीय कार्यालय

82, पटेल कॉलोनी, सरदार पटेल मार्ग,
जयपुर (राज.) 302001
दूरभाष : 9414040403

दिल्ली ब्यूरो :

शैक्षिक महासंघ सदन, 606/13,
कृष्णा गली नं.9, मौजपुर, दिल्ली-110053
दूरभाष : 011-22914799

E-mail :
shaikshikmanthan@gmail.com
Visit us at :
www.shaikshikmanthan.com

एक प्रति 20/-   वार्षिक शुल्क 200/-
आजीवन (दस वर्ष) 1500/-

पृष्ठ संयोजन : सागर कम्प्यूटर, जयपुर

शैक्षिक मंथन मासिक में प्रकाशित सामग्री से संपादक मण्डल का सहमत होना आवश्यक नहीं है।

कर्त्तव्य और अधिकार ❑ मा. गो. वैद्य

'धर्म' जोड़ने वाली प्रक्रिया है। 'राजधर्म' राजा को प्रजा के साथ तो प्रजाधर्म, प्रजा को राजा के साथ। पुत्रधर्म पुत्र को माता-पिता के साथ तो पितृधर्म, पिता को पुत्र के साथ। यही कर्त्तव्य की मौलिक अवधारणा है। हम अपना कर्त्तव्य करें। जिस के संबंध में वह कर्त्तव्य है, उसके अधिकार की आप ही आप रक्षा हो जायेगी। कर्त्तव्य पड़ोसी के साथ बर्ताव का भी हो सकता है। वह पड़ोसी के अधिकार का भी रक्षण करेगा और पड़ोसी को अपने साथ जोड़ेगा भी।

6

अनुक्रम

4.	कर्त्तव्यपरायणता में निहित जीवन की सार्थकता	– सन्तोष पाण्डेय
8.	कर्त्तव्य–कर्म मीमांसा	– हनुमान सिंह राठौड़
11.	धर्म चक्र–प्रवर्त्तनाय	– प्रो. मधुर मोहन रंगा
13.	कर्त्तव्य में निहित हैं अधिकार	– सीताराम व्यास
15.	'धर्म' की अवधारणा एवं महत्ता	– डॉ. बुद्धमति यादव
17.	वैश्विक कर्त्तव्य और गीता	– विष्णुप्रसाद चतुर्वेदी
19.	कर्त्तव्य पालन - चेतना एवं चरित्र	– प्रो.अल्पना कटेजा
21.	ज्ञान युक्त कर्म ही कर्त्तव्य	– डॉ. ओम प्रकाश पारीक
24.	कर्त्तव्यनिष्ठा का सम्मान	– बजरंग प्रसाद मजेजी
26.	कर्त्तव्य पालन–संस्कृति का मूल तत्व	– डॉ. रेखा भट्ट
28.	कर्त्तव्य : समाज का आधार	– बजरंगी सिंह
30.	कर्त्तव्य निर्वाह में कोताही	– जगमोहन सिंह राजपूत
36.	Kartavyabodh and Demonetization	– Prof. A. K. Gupta
43.	गुणवत्ता का पाठ	– कैलाश चंद्र काण्डपाल
44.	नर पुंगव कर्त्तव्य ..... (कविता)	– भरत शर्मा 'भारत'
45.	मूल्यांकन की समस्या	– डॉ. ललित कुमार
47.	कम नगद मौद्रिक व्यवस्था को प्रोत्साहन	– सन्तोष पाण्डेय
49.	उत्तरायण व मकर संक्रान्ति	– विष्णुप्रसाद चतुर्वेदी
51.	Education in IITs in Today's	– Prof. C.V. R. Murty
56.	गतिविधि	

Duties and Rights ❑ Prof. TS Girishkumar

The whole thing is so different in Bharat. The Karma theory taught to us through Gita lives with us, making continuous impacts in our living day in and day out, explicitly or implicitly. We live karma, we live Kartavya, and we live Duty in all its forms. Dharma enables us to perform them; Dharma enables us to go forward with them, in complete ease and without an iota of strain. We may not be conscious of these things at all, but we keep performing them. That is Bharatiya Parampara, Sanskriti, and Dharma.

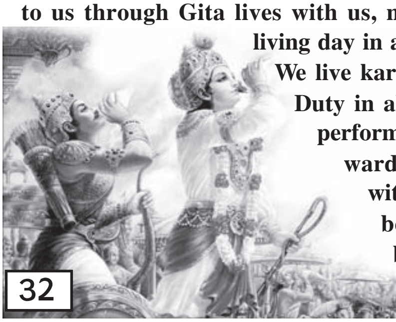

32

कर्त्तव्यपरायणता में निहित जीवन की सार्थकता

एक ओर जहाँ संसार भारतीय कर्म आधारित आत्मिक सुख की अनुभूति की ओर अग्रसर है, वहीं स्वातंत्रोत्तर कालखण्ड में सर्वत्र अधिकारों माँग गूँज रही है। देश के संविधान में मूल अधिकारों की व्यवस्था ने समानता, पंथ (Religion) व अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता सुनिश्चित की। इनसे संबंधित मूल्यों (values) व प्रजातांत्रिक मूल्यों को स्थापित करने की महती आवश्यकता थी। इन मूल्यों का तो सुदृढ़ आधार तैयार नहीं हो सका परन्तु भारतीय दर्शन के मूल्यों को पंथ निरपेक्षता के बजाय तथाकथित धर्मनिरपेक्षता को संरक्षण देकर विस्थापित कर दिया गया। इससे समाज दोराहे पर आ गया। परम्परागत धर्माचरण के मौलिक भाव को विस्मृत कर विकल्प में अधिकारों का ऐसा संजाल थमा दिया, जिसमें कर्त्तव्य पालन अत्यन्त ही दुर्लभ गुण बन गया है। यह किसी भी प्रकार से उचित स्थिति नहीं कही जा सकती है।

❑ सन्तोष पाण्डेय

संपादकीय

जीवन के किसी भी क्षेत्र में उत्कृष्ट परिणाम देने वाले, सफल होने वाले व जीवन की सार्थकता का उदाहरण बनने वाले सभी व्यक्तियों में एक अवयव जो समान रूप से विद्यमान होता है, वह है उनकी कर्त्तव्यपरायणता व कर्त्तव्यों के प्रति समर्पण जो उन्हें नैतिक रूप से करणीय कार्यों को करने तथा दायित्वों का निर्वाह करने की प्रेरणा अन्तर्मन से देता है। कर्त्तव्य निर्वाह के प्रति सदैव सजग रहना मनुष्य के लिये श्रेष्ठतम गुणों में से एक है जो उसे सदैव धर्मसंगत व नैतिक आचरण के लिये प्रेरित करता है। धर्म का अभिप्राय: इसके समानार्थक अंग्रेजी शब्द रिलीजन से नहीं है, वरन् नैतिक व सामाजिक रूप से सर्वमान्य व्यवहार-मानदण्डों को अपनाने व उन पर आचरण करने से है। धर्म के रूप में करणीय कार्य एक प्रकार से स्वभाव व प्रकृति के रूप में प्रकट होते हैं। सभी धर्मसंगत व स्वभावजन्य करणीय कार्यों का सम्पादन उनके सामाजिक व नैतिक औचित्य को प्रकट करता है। समस्त करणीय कार्य संबंधित देश के समाज व संस्कृति से उत्पन्न होते हैं। समाज व संस्कृति जिन कार्यों को नैतिक रूप से उचित व तर्कसंगत मानती हैं, उनको वैयक्तिक व सामाजिक आचरण में प्रकट करना ही धर्म है, दायित्व है या कर्त्तव्य है। सामाजिक संस्थाओं का उद्भव भी इन्हीं धर्म संगत आचरणों का पालन सुनिश्चित करने के नियम व परम्परा के रूप में होता है। समाज द्वारा व्यक्ति में इनको समाविष्ट करने का कार्य उसके जन्म के साथ समाज के प्रथम सम्पर्क से ही प्रारंभ हो जाता है। यही है संस्कार निर्माण की स्वाभाविक सामाजिक प्रक्रिया। स्पष्टत: संस्कार व्यक्ति को कर्त्तव्य निर्वाह के साथ ही ऐसे अभेद्य कवच के रूप में होते हैं जो व्यक्ति के आचरण को धर्मसंगत बनाने में योग देते हैं। कर्त्तव्य रूपी धर्म के निर्वाह में किसी प्रकार का दबाव या बाध्यता का अंश नहीं होता है वरन् संस्कारों के रूप में व्यक्ति के व्यक्तित्व में सम्मिलित हो जाते हैं कि कर्त्तव्य निर्वाह अन्त:करण की प्रेरणा से व्यवहार में प्रकट होने लगता है। ऐसे संस्कारों से युक्त व्यक्ति ही समाज के नैतिक व सांस्कृतिक मूल्यों का वाहक बनकर धर्मसंगत आचरण करता है। जब सम्पूर्ण समाज धर्म संगत आचरण करता है और अपेक्षित कर्त्तव्यों का पालन करता है, जो समाज में एक प्रकार की समरसता आ जाती है, जहाँ हितों का टकराव नहीं होता है। आज की भाषा में कहें तो अधिकार का प्रश्न नहीं उठता है। वर्तमान समय की सबसे बड़ी त्रासदी है कि सर्वत्र ही अधिकारों की आवाज सुनायी देती है, कर्त्तव्य पालन का भाव अधिकारों के दबाव में प्रष्ठभूमि में चला गया है यह वह संदर्भ है, जिसमें विचार करना आवश्यक है कि 'सदा याद रहे कर्त्तव्य' की अवस्था को कैसे पुनर्जीवित किया जाय।

भारतीय संस्कृति का आधार अध्यात्म व प्रकृति के साथ सहजीवन है। अति प्राचीनकाल से ही भौतिक सुख के साधनों के विकास के साथ-साथ आध्यात्मिक सुख की प्राप्ति पर बल दिया गया है, इस संदर्भ में समाज के प्रत्येक सदस्य व सदस्यों के अन्तर्सबंधों के लिये कार्य (कर्त्तव्य या रोल्स) निश्चित किये गये हैं, जो धर्म के रूप में प्रकट होते हैं। श्रीमद्भगवद्गीता में भगवान श्रीकृष्ण द्वारा अर्जुन को दिये उपदेश इन्हीं कार्यों, कर्त्तव्यों व धर्म का रूप ग्रहण करते हैं। श्री कृष्ण के उपदेशों में मनुष्य को कर्म (कर्त्तव्य) करने की प्रेरणा दी गई है। कर्म अर्थात् करणीय आचरण में किसी भी प्रकार की मोह-माया, मान-अपमान, लगाव-विलगाव आदि बाधक नहीं बनने चाहिये। ये सभी बाधायें फल अर्थात् कर्म या कर्त्तव्य पालन के परिणाम की चिन्ता के रूप में प्रकट होती है। मनुष्य को इन बाधाओं से उपर उठकर फलाफल की चिन्ता किये बिना ही धर्म संगत आचरण करना चाहिये, कर्त्तव्य का निर्वाह करना चाहिये। कर्त्तव्य पालन अन्त:करण की प्रेरणा से संपन्न होने से मनुष्य एक विशिष्ट शांति व संतुष्टि की अनुभूति

करता है, यही आध्यात्मिक सुख है, जिसकी कामना प्रत्येक मनुष्य करता है। इस प्रकार के सुख व शांति की कामना के कारण ही आज सम्पूर्ण विश्व में गीता-ज्ञान स्वीकार्य हो रहा है। भारतीय समाज व संस्कृति की विश्वदृष्टि (World Vision) कर्त्तव्यपालन के रूप में धर्म संगत व्यवहार करने में निहित है। पश्चिमी दर्शन की विश्व-दृष्टि प्रकृति पर विजय प्राप्त कर उसका उपयोग वैयक्तिक भौतिक सुख की अभिवृद्धि में निहित है, जो स्वभावत: मनुष्य में सहयोग व समन्वय के स्थान पर प्रतिस्पर्द्धा व अधिकारों का भाव जगाती है। इसकी परिणति आज सर्वत्र अधिकारों की प्राप्ति के लिये संघर्षों के रूप में सामने आ रही है। प्रत्येक व्यक्ति, समाज व प्रकृति से अधिक से अधिक लेना चाहता है। वह समाज व प्रकृति को कुछ भी देना नहीं चाहता है। परन्तु क्या किसी प्रकार का त्याग बिना कर्त्तव्य निर्वाह किये बिना सदैव लेते रहना संभव है? जब तक यह स्वीकार नहीं किया जाता कि एक व्यक्ति के अधिकार ही दूसरे व्यक्ति के कर्त्तव्य हैं, यदि वे कर्त्तव्य निर्वाह नहीं करें तो व्यक्ति के अधिकारों की रक्षा कैसे हो सकेगी? इस पर विचार-मंथन अपेक्षित है।

पश्चिमी संस्कृति तर्क निरूपण जिसे वैज्ञानिक दृष्टिकोण कहा जाता है, के माध्यम से वैज्ञानिक विकास तथा उसके माध्यम से प्रकृति पर विजय प्राप्त कर प्रकृति से अधिक से अधिक प्राप्त करने की भावना पर आधारित है। इसमें कर्म (कार्य) लक्ष्य प्राप्ति की अपेक्षा से किये जाते हैं। लक्ष्य की सिद्धि से विजेता व अधिकार के भाव का उदय होता है। अधिकारों की अवधारणा को हाब्स, लॉक व रूसो के 'सामाजिक संविदा सिद्धान्तों' (Social Contract Theories) ने पुष्ट किया जिसके अनुसार व्यक्ति मूलत: स्वतंत्र पैदा हुआ है। समाज को व्यवस्थित बनाने की दृष्टि से उसने अपने अधिकार राज्य रूपी संस्था को सौंप दिये, एतदर्थ राज्य व समाज के अधिकार कभी व्यक्तिगत स्वातंत्र्य या अधिकारों से बड़े नहीं हो सकते। इस एक पक्षीय दृष्टिकोण को अपनाने का ही परिणाम है कि आज का विकसित समाज अनेक विकृतियों से ग्रस्त हो कुंठित हो रहा है। विकसित समाज में चहुँ ओर अधिकारों की ही गूंज है। मानवाधिकार, बाल अधिकार, महिला अधिकार, श्रमिक अधिकार, अबाधित स्वातंत्र्य का अधिकार, राज्य के अधिकार जैसे अनेकानेक अन्य अधिकार जो समाज पर एक प्रकार दावे के रूप में होते हैं, से युक्त होने के बावजूद समाज में संघर्ष, असंतोष, अशांति व एक प्रकार के अकेलेपन (Lonliness) व असुरक्षा की मनोभावनाओं से ग्रस्त हैं। वे इसका हल 'हरे राम, हरे कृष्ण' आन्दोलन व अब गीता-ज्ञान के रूप में देखने लगे हैं। अब विश्व यह अनुभव करता है कि प्रकृति पर विजय के प्रयास अन्तत: उसी के विनाश का माध्यम बनेंगे। आज संपूर्ण विश्व में प्रकृति के साथ सहयोग करने, उसके संरक्षण हेतु सचेत करने संबंधी प्रयास, संकेतक है कि मनुष्य को अधिकारों की मर्यादा पहचाननी चाहिये तथा अधिकारों की प्राप्ति हेतु उपयुक्त कर्म (कर्त्तव्य या धर्म) का निर्वाह करना चाहिये। यही भारतीय दृष्टिकोण व संस्कृति है, जिसकी अनुभूति विश्व को हो रही है।

एक ओर जहाँ संसार भारतीय कर्म आधारित आत्मिक सुख की अनुभूति की ओर अग्रसर है, वहीं स्वातंत्रोत्तर कालखण्ड में सर्वत्र अधिकारों माँग गूँज रही है। देश के संविधान में मूल अधिकारों की व्यवस्था ने समानता, पंथ (Religion) व अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता सुनिश्चित की। इनसे संबंधित मूल्यों (values) व प्रजातांत्रिक मूल्यों को स्थापित करने की महती आवश्यकता थी। इन मूल्यों का तो सुदृढ़ आधार तैयार नहीं हो सका परन्तु भारतीय दर्शन के मूल्यों को पंथ निरपेक्षता के बजाय तथाकथित धर्मनिरपेक्षता को संरक्षण देकर विस्थापित कर दिया गया। इससे समाज दोराहे पर आ गया है। परम्परागत धर्माचरण के मौलिक भाव को विस्मृत कर विकल्प में अधिकारों का ऐसा संजाल थमा दिया, जिसमें कर्त्तव्य पालन अत्यन्त ही दुर्लभ गुण बन गया है। यह किसी भी प्रकार से उचित स्थिति नहीं कही जा सकती है। देश आज जिस विकास पथ पर आगे बढ़ रहा है, उससे उत्पन्न संस्कृति में कर्त्तव्य पालन के भाव को हर हाल में स्थापित करना होगा। आज भारतीय समाज में व्यापक परिवर्तन हो रहे हैं। परिवार विवाह जैसी सामाजिक संस्थाओं का स्वरूप बदल रहा है। समाज के सदस्य के कार्य (Roles) बदल रहे हैं। इस परिवर्तन को लाने में बड़ा अंश अधिकारों के प्रति अधिक जागरूक होना है। इन अधिकारों की प्राप्ति दूसरे संबंधित व्यक्ति के कर्त्तव्य पालन में निहित है? ऐसी वर्तमान सामाजिक स्थिति में यह आवश्यक हो जाता है कि कर्त्तव्य निर्वाह के प्रति जागरूकता बढ़ायी जाये। बाल्यकाल में स्कूलों की जाने वाली प्रार्थना 'वह शक्ति हमें दो दया निधे कर्त्तव्य मार्ग पर डट जायें, पर सेवा पर उपकार में हम निज जीवन सफल बना जायें' के माध्यम से बाल्यकाल से कर्त्तव्य निर्माण के संस्कार व्यक्ति में समाहित किये जायें। देश की शिक्षा प्रणाली में अधिकारों का उल्लेख अवश्य हो परन्तु मुख्य रूप से भारतीय मूल्यों व संस्कारों के निर्माण पर अधिकाधिक बल दिया जाये। सामाजिक परिवर्तनों की गति अति मंद होती है। अत: सतत् प्रयास ही भारत की आत्मा-कर्त्तव्य परायणता पुनर्जीवित हो सकेगी। इसके लिये आवश्यक है 'सदा याद रहे कर्त्तव्य' का भाव जगाने वाली शिक्षा व्यवस्था बनायी जाये। इस व्यवस्था निर्माण में सर्वाधिक महत्त्व का दायित्व शिक्षक का है। ❑

कर्त्तव्य और अधिकार

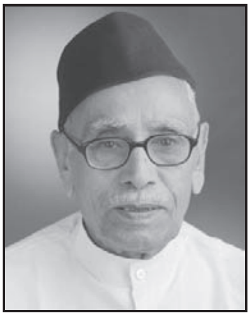

'धर्म' जोड़ने वाली प्रक्रिया है। 'राजधर्म' राजा को प्रजा के साथ तो प्रजाधर्म, प्रजा को राजा के साथ। पुत्रधर्म पुत्र को माता-पिता के साथ तो पितृधर्म, पिता को पुत्र के साथ। यही कर्त्तव्य की मौलिक अवधारणा है। हम अपना कर्त्तव्य करें। जिस के संबंध में वह कर्त्तव्य है, उसके अधिकार की आप ही आप रक्षा हो जायेगी। कर्त्तव्य पड़ोसी के साथ बर्ताव का भी हो सकता है। वह पड़ोसी के अधिकार का भी रक्षण करेगा और पड़ोसी को अपने साथ जोड़ेगा भी। शिष्य अपने धर्म का पालन करें, वह अपने को गुरु के साथ स्वयं को जोड़ेगा जिससे गुरु के अधिकारों का भी रक्षण होगा। कर्त्तव्य और अधिकार का ऐसा ही घनिष्ठ संबंध है। कर्त्तव्य हमारा और अधिकार दूसरों का। पाश्चात्त्य विचार के अनुसार 'अधिकार' को प्राथमिकता है। अपनी संस्कृति में 'कर्त्तव्य' को प्राथमिकता है।

❑ **मा. गो. वैद्य**

अपनी हिंदू संस्कृति में कर्त्तव्यों की चर्चा है। अधिकारों की नहीं। संस्कृत व्याकरण में 'तव्य' और 'अनीय' ये प्राय: समानार्थक प्रत्यय हैं। 'कृ' धातु को 'तव्य' प्रत्यय लगने से 'कर्त्तव्य' शब्द बनता है, तो 'अनीय' प्रत्यय लगने से 'करणीय' शब्द बनता है। जो 'करणीय' है, वही 'कर्त्तव्य' है।

अपने यहाँ, जैसा कि उपर बताया है अधिकारों की चर्चा नहीं है। क्योंकि 'कर्त्तव्य' प्रधान है और अधिकार आनुषंगिक। 'कर्त्तव्य' का जब ठीक ढंग से क्रियान्वयन होता है, उससे अधिकारों की भी रक्षा हो जाती है। अत: अधिकारों की चर्चा नहीं है।

अपनी भाषा में एक विशेष अर्थ का प्रतिपादन करने वाला 'धर्म' शब्द है। अंग्रेजी भाषा में 'धर्म' के लिये कोई भी समग्र पर्यायवाची शब्द नहीं है। अंग्रेजी में अक्सर 'धर्म' का 'रिलिजन' ऐसा पर्याय दिया जाता है, किन्तु वह अपर्याप्त है। 'रिलिजन' धर्म का एक अंग है, संपूर्ण 'धर्म' नहीं। अपनी भाषा के कुछ शब्द ही लीजिये। जैसे 'धर्मशाला'। अंग्रेजी में इस का क्या अनुवाद करेंगे? क्या 'धर्मशाला' रिलिजियस स्कूल है? 'धर्मार्थ अस्पताल' क्या यहाँ रिलिजन पर उपचार होते हैं? 'धर्मकांटा' क्या इस पर रिलिजन का या मजहब का तोल होता है? 'राजधर्म' क्या यह राजा का रिलिजन है, जो प्रजा का नहीं है। अथवा 'पुत्रधर्म' क्या यह पुत्र का मजहब है जो उसके माँ-बाप का नहीं है। मैं यहाँ 'धर्म' की व्यापक व्याख्या करने नहीं जा रहा हूँ। मैं यहाँ यह बात अधोरेखित करना चाहता हूँ कि 'धर्म' बडा व्यापक अर्थ रखने वाला शब्द है। 'धर्म' का एक अर्थ 'कर्त्तव्य' भी है।

'राजधर्म' यानी राजा के कर्त्तव्य। किस के प्रति ये कर्त्तव्य है। उत्तर है प्रजा के प्रति। 'पुत्रधर्म' यानी पुत्र के कर्त्तव्य अपने माता-पिता के संबंध में। राजा ने अपने कर्त्तव्यों का पालन किया कि प्रजा के सारे अधिकारों का निर्वाह होता है। वैसे ही पुत्र ने अपने कर्त्तव्यों का पालन किया कि माँ-बाप के अधिकारों की अपने आप ही रक्षा हो

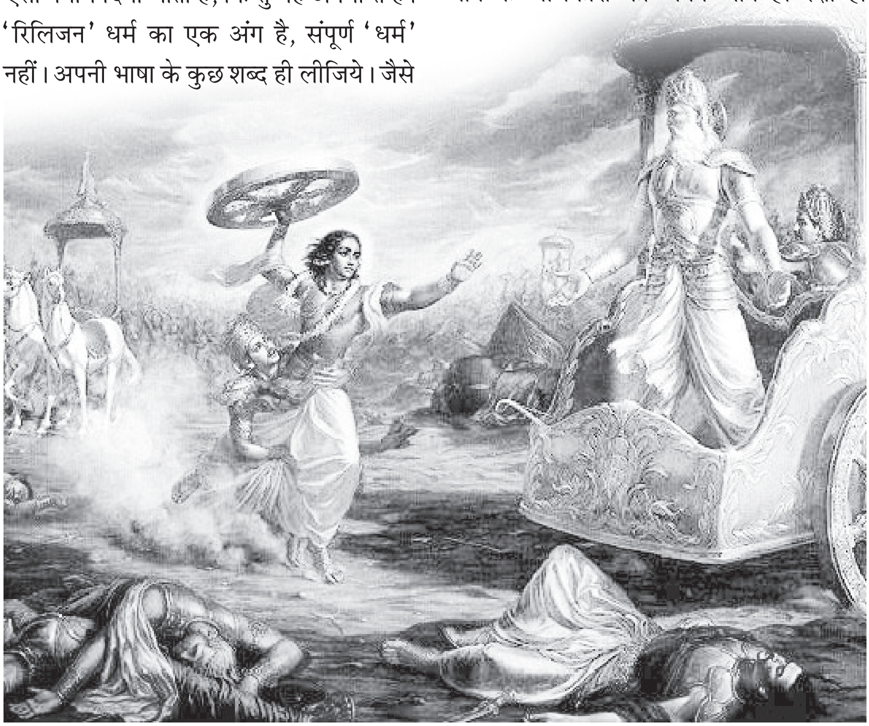

जाती है। जैसे 'राजधर्म' अथवा 'पुत्रधर्म' ये शब्द हैं, वैसे ही प्रजाधर्म और पितृधर्म भी शब्द है। 'प्रजाधर्म' के पालन से राजा के अधिकारों का निर्वाह हो जाता है, वैसे ही पितृधर्म से पुत्र के अधिकारों का रक्षण हो जाता है। इसलिये मैंने कहा कि कर्त्तव्य प्राथमिक है और अधिकार आनुषंगिक।

'धर्म' किसी भी व्यवस्था को जोड़ने का भी काम करता है। 'राजधर्म' राजा को प्रजा के साथ जोड़ता है। किस प्रकार जोड़ता है इसका एक उदाहरण महाकवि कालिदास ने राजा दिलीप के वर्णन में 'रघुवंश' महाकाव्य में दिया है। कवि कालिदास राजा दिलीप के बारे में लिखते हैं–

प्रजानां विनयाधानाद् रक्षणाद् भरणादपि।
स पिता पितरस्तां केवलं जन्महेतवः ॥

अर्थ स्पष्ट है– वह दिलीप राजा प्रजा को नीति की शिक्षा देने के कारण तथा उनका रक्षण और पोषण करने के कारण ही उनका पिता बन गया। इसी राजा के बारे में कालिदास और एक बात लिखते हैं–

प्रजानामेव भूत्यर्थं स ताभ्यो बलिमग्रहीत्।
सहस्त्रगुणमुत्स्त्रष्टुमादत्ते हि रसं रविः ॥

अर्थ– प्रजा के ही कल्याण के लिये वह राजा उनसे कर ग्रहण करता था। काहे के लिये। तो उनको फिर से हजारों की मात्रा में देने के लिये। जैसे सूर्य पृथ्वी का जल लेता है किन्तु पर्जन्य के रूप में फिर से देने के लिये।

तात्पर्य यह है कि 'धर्म' जोड़ने वाली प्रक्रिया है। 'राजधर्म' राजा को प्रजा के साथ तो प्रजाधर्म, प्रजा को राजा के साथ। पुत्रधर्म पुत्र को माता–पिता के साथ तो पितृधर्म, पिता को पुत्र के साथ। यही कर्त्तव्य की मौलिक अवधारणा है। हम अपना कर्त्तव्य करें। जिस के संबंध में वह कर्त्तव्य है, उसके अधिकार की आप ही आप रक्षा हो जायेगी। कर्त्तव्य पड़ोसी के साथ बर्ताव का भी हो सकता है। वह पड़ोसी के अधिकार का भी रक्षण करेगा और पड़ोसी को अपने साथ जोड़ेगा भी। शिष्य अपने धर्म का पालन करें, वह अपने को गुरु के साथ स्वयं को जोड़ेगा जिससे गुरु के अधिकारों का भी रक्षण होगा। कर्त्तव्य और अधिकार का ऐसा ही घनिष्ठ संबंध है, कर्त्तव्य हमारा और अधिकार दूसरों का।

पाश्चात्त्य विचार के अनुसार 'अधिकार' को प्राथमिकता है। अपनी संस्कृति में 'कर्त्तव्य' को प्राथमिकता है। कारण पाश्चात्त्यों में व्यक्ति की महत्ता है, समाज की उससे कम। अपने यहाँ उलटा क्रम हैं। कर्त्तव्य व्यक्ति का किन्तु उसका उद्देश्य समाज की भलाई का है अतः अधिकारों की अपने यहाँ विशेष चर्चा नहीं है। ❑

(तरुण भारत के पूर्व सम्पादक तथा रा.स्व.संघ के पूर्व प्रवक्ता)

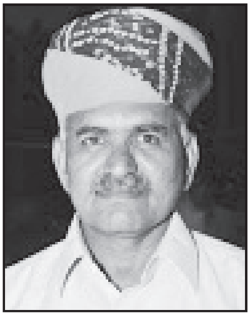

भारत की ऋषि परम्परा मानती है कि मनुष्य स्वभाव केवल स्वार्थी नहीं, उसमें दया, प्रेम, कृतज्ञता, परदुःख कातरता आदि सद्‌गुण भी न्यूनाधिक रहते हैं। उसके अपनत्व का परास जितना बढ़ता है, ये गुण उतने ही विकसित होते हैं। अतः धर्म-अधर्म की परीक्षा केवल स्वार्थ से करना शास्त्र की दृष्टि से भी उचित नहीं है। याज्ञवल्क्य ऋषि एक प्रश्न के उत्तर में कहते हैं- ''हे मैत्रेयी! स्त्री अपने पति को चाहती है, वह पति के लिए नहीं किन्तु वह अपनी आत्मा के लिए उसे चाहती है। इसी तरह हम अपने पुत्र से उसके हितार्थ प्रेम नहीं करते, किन्तु हम स्वयं अपने ही लिए उससे प्रेम करते हैं। द्रव्य, पशु और अन्य वस्तुओं के लिए भी यही न्याय उपयुक्त है।'' 'आत्मनस्तु कामाय सर्वं प्रियं भवति'- अपनी आत्मा के प्रीत्यर्थ ही सब पदार्थ हमें प्रिय लगते हैं। 'आत्मवत् सर्वभूतेषु य पश्यति' सबमें एक ही आत्मा के दर्शन का साक्षात्कार होने पर अधिकार भाव लुप्त हो जाता है, कर्त्तव्य भाव ही शेष रहता है, शिव भाव से जीवमात्र की सेवा ही लक्ष्य रहता है।

कर्त्तव्य-कर्म मीमांसा

❑ हनुमान सिंह राठौड़

कर्त्तव्य क्या है? 'करना ही है जो काम' वह कर्त्तव्य है। पर प्रश्न पुनः उपस्थित होता है कि कौनसा काम करना अनिवार्य है तथा यह तय किस मापदण्ड के आधार पर होगा? नीतिकार कहते हैं कि इसका आधार धर्म होगा। जो धर्म है वही कर्त्तव्य है, जो अकर्त्तव्य है वही अधर्म है। तब पुनः प्रश्न उठता है कि धर्म क्या है?

धर्म- नित्य व्यवहार में धर्म से तात्पर्य 'पारलौकिक सुख का मार्ग' समझा जाता है। परन्तु धर्म का अर्थ इतना संकुचित नहीं है। राजधर्म, प्रजाधर्म, देशधर्म, कुलधर्म, मित्रधर्म, वस्तुगुणधर्म इत्यादि सांसारिक नीति-नियमों को भी धर्म कहते हैं। पारलौकिक धर्म को 'मोक्षधर्म' या केवल मोक्ष तथा व्यावहारिक धर्म अथवा नीति को केवल धर्म कहते हैं। इसी को आजकल कर्त्तव्य कर्म, नीति, नीतिधर्म अथवा सदाचरण कहते हैं।

धारणाद्धर्ममित्याहुः धर्मो धारयते प्रजाः।
यत्स्याद्धारणसंयुक्तं स धर्म इति निश्चयः।।

(महा. कर्ण. 69-59, शांति. 109-12)

'धर्म शब्द 'धृ' (= धारण करना) धातु से बना है। धर्म से ही समस्त प्रजा धारित है। यह निश्चय किया गया है कि जिससे (समस्त प्रजा का) धारण होता है वही धर्म है।'

महाभारत (अनु. 104-157) एवं स्मृति ग्रंथों में 'आचार प्रभवो धर्मः' अथवा 'आचारः परमोधर्मः' (मनु. 1-108) कहा गया है।

मीमांसा (जैमिनी सूत्र 1-1-2) के अनुसार 'चोदनालक्षणोऽर्थो धर्मः' अर्थात् चोदना= प्रेरणा, किसी अधिकारी पुरुष द्वारा कर्म के सम्बन्ध में किया गया विधि-निषेधात्मक कथन धर्म है।

धर्म को 'आचार प्रभव' कहें, 'धारणात् धर्म' मानें अथवा 'प्रेरणा लक्षण धर्म' समझें, धर्म की अर्थात् व्यावहारिक नीति बंधनों की कोई भी व्याख्या अपनायें, परन्तु जब धर्म-अधर्म का संशय उत्पन्न होता है, तब उसका निर्णय करने के लिए उपर्युक्त तीनों लक्षणों का कोई उपयोग नहीं होता। प्रथम व्याख्या से केवल यह स्पष्ट होता है कि धर्म का मूल स्वरूप क्या है? द्वितीय व्याख्या उसका सामाजिक उपयोग बताती है और तृतीय व्याख्या से यह बोध होता है कि धर्म की मर्यादा आदिकाल

में किसी ने तय कर दी है।

फिर कर्त्तव्य-अकर्त्तव्य, धर्म-अधर्म के निश्चय का मार्ग कौनसा है? युधिष्ठिर ने इस यक्ष-प्रश्न के उत्तर में कहा -

तर्कोऽप्रतिष्ठः श्रुतयो विभिन्नाः
नैको ऋषिर्यस्य मतं प्रमाणम्।
धर्मस्य तत्त्वं निहितं गुहायां
महाजनो येन गतः स पंथाः।।

(महा. वन. 313-117)

किन्तु प्रश्न पुनः उपस्थित होता है कि महाजन किसे कहें? इसका तात्पर्य 'बड़ा या बहुत सा जन समूह' 'बहुमत का आचरण' नहीं हो सकता, क्योंकि कठोपनिषद् की 'अंधेनैव नीयमाना यथांधा' (अंधे-अंधा ठेलिया, दोनों कूप पंडत) वाली नीति चरितार्थ हो जाएगी।

भौतिकवादियों का मानना है कि किसी कर्म के भले या बुरे होने का निर्णय उसके परिणाम से करना पर्याप्त है। इसकी विवेचना के लिए अध्यात्म शास्त्र की आवश्यकता नहीं है।'सब मनुष्यों का सुख' ही परम उद्देश्य है अतः नीति-निर्णय का सच्चा मार्ग यही होना चाहिए कि सब कर्मों की नीतिमता, सुख प्राप्ति या दुःख निवारण का तारतम्य देखकर निश्चित हो।

पर प्रकट स्वार्थ संसार में चल नहीं सकता। जब हमारा सुख अन्य लोगों के सुखोपभोग में बाधक बनता है तो वे प्रभावित लोग विघ्न उपस्थित किये बिना नहीं रहते। अतः उनका दूसरा विकल्प है कि 'यद्यपि स्वयं का सुख या स्वार्थ-साधन प्राथमिक उद्देश्य है किन्तु अन्य लोगों के सुख की ओर भी दुर्लक्ष्य नहीं करना चाहिए।'

भारत की ऋषि परम्परा मानती है कि मनुष्य स्वभाव केवल स्वार्थी नहीं, उसमें दया, प्रेम, कृतज्ञता, परदुःख कातरता आदि सद्गुण भी न्यूनाधिक रहते हैं। उसके अपनत्व का परास जितना बढ़ता है, ये गुण उतने ही विकसित होते हैं। अतः धर्म-अधर्म की परीक्षा केवल स्वार्थ से करना शास्त्र की दृष्टि से भी उचित नहीं है।

वृहदारण्यकोपनिषद् (2-4-4-5) में याज्ञवल्क्य ऋषि एक प्रश्न के उत्तर में कहते हैं- ''हे मैत्रेयी! स्त्री अपने पति को चाहती है, वह पति के लिए नहीं किन्तु वह अपनी आत्मा के लिए उसे चाहती है। इसी तरह हम अपने पुत्र से उसके हितार्थ प्रेम नहीं करते, किन्तु हम स्वयं अपने ही लिए उससे प्रेम करते हैं। द्रव्य, पशु और अन्य वस्तुओं के लिए भी यही न्याय उपयुक्त है।'' 'आत्मनस्तु कामाय सर्वं प्रियं भवति'- अपनी आत्मा के प्रीत्यर्थ ही सब पदार्थ हमें प्रिय लगते हैं। याज्ञवल्क्य ने 'स्वार्थ' शब्द के 'स्व' से ही आत्मा में सब भूतों का और सब भूतों में अपने आत्मा का, अविरोध दिखने वाले द्वैत के झगड़े की जड़ को ही काट डाला। स्वामी विवेकानन्द भी कहते हैं कि 'सर्व भूत हित रत' रहने के कर्त्तव्य की व्याख्या केवल वेदान्त करता है, 'आत्मवत् सर्वभूतेषु य पश्यति' सबमें एक ही आत्मा के दर्शन का साक्षात्कार होने पर अधिकार भाव लुप्त हो जाता है, कर्त्तव्य भाव ही शेष रहता है, शिव भाव से जीवमात्र की सेवा ही लक्ष्य रहता है।

धर्म का यह मर्म समझ लिया तो सर्वत्र शुभ ही होगा, विद्यार्थी में भी विष्णु का, दरिद्र में नारायण का, दीन में दीनबंधु का अनुभाव होगा। सबमें 'स्व' का दर्शन होने पर कोई पराया नहीं होता सब अपना होता है। यह अपनापन क्रमशः परिवार, समाज, राष्ट्र, विश्व अर्थात् - व्यष्टि से समष्टि तक विस्तार पाता है तब व्यक्ति नर से नरोत्तम व नारायण तक की यात्रा पूर्ण करता है।

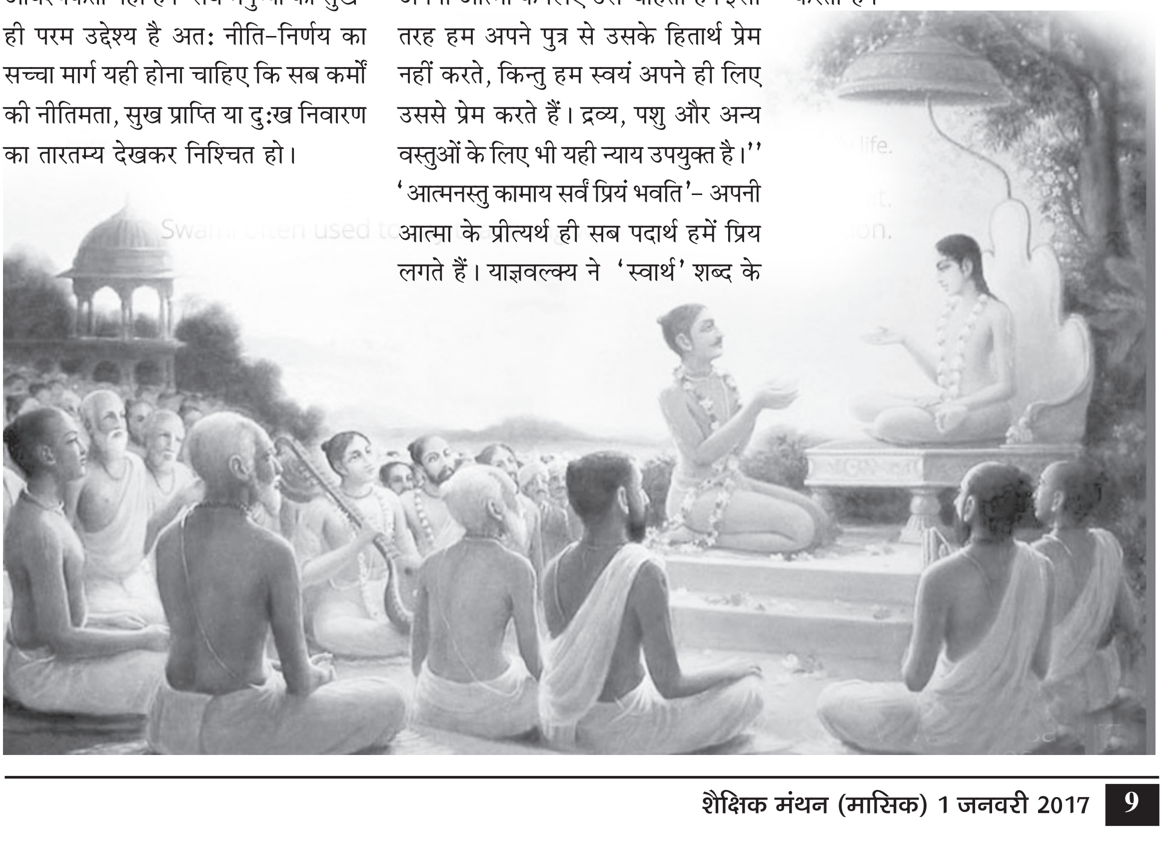

कर्म- कर्म शब्द 'कृ' धातु से बना है। इसका अर्थ 'करना, व्यापार, हलचल' होता है। कर्म की चार अवस्थाएँ हैं-

1. कर्तापन व कामना दोनों की उपस्थिति हो। यह कर्म बुरा या अच्छा, दोनों हो सकता है।
2. कर्तापन किन्तु कामना नहीं- कर्त्तव्य बुद्धि से कर्म करना।
3. कामना पर कर्म नहीं - मिथ्याचारी, ढपोर शंख
4. कामना भी नहीं कर्तापन भी नहीं - मूढ या नैष्कर्म्य सिद्ध दोनों में ही सम्भव।

कोई व्यक्ति क्षण भर भी बिना कर्म नहीं रह सकता अत: सामान्य व्यक्ति के लिए कर्त्तव्य बुद्धि से कर्म करना ही उचित है। गीता (3-5) में श्री कृष्ण कहते हैं।

न हि कश्चित् क्षणमपि जातु तिष्ठत्यकर्मकृत्
कार्यते ह्यवशः कर्म सर्वः प्रकृतिजैर्गुणैः।।

प्रकृति से उत्पन्न गुणों द्वारा विवश होकर सभी को प्रतिक्षण कर्म करना पड़ता है तो श्री कृष्ण कहते हैं कि कर्म न करने की अपेक्षा नियत कर्म करना श्रेष्ठ है-

'नियतं कुरू कर्म त्वं कर्म ज्यायो ह्यकर्मणः' (गीता 3-8) नियत कर्म क्या हैं? यह जानने से पूर्व कर्म के भेद जानना उपयुक्त रहेगा-

1. नित्य कर्म- जिनका पालन कोई फल उत्पन्न नहीं करता।
2. नैमित्तिक कर्म - नहीं करने से हानि नहीं, करने से लाभ।
3. काम्य कर्म - किसी फल की इच्छा से, कामना पूर्ति हेतु।
4. निषिद्ध कर्म - किसी भी दशा में अकरणीय कर्म।

गीता में कर्म, अकर्म व विकर्म की भी चर्चा है। कक्षा में जाने से पूर्व प्राध्यापक तैयारी करके जाता है तथा विद्यार्थी ध्यान से अध्ययन करते हैं, यह कर्म है। प्राध्यापक कालांश में अध्यापन करवा रहा हो और विद्यार्थी मोबाइल में तल्लीन हो यह अकर्म है। कालांश में विद्यार्थी अन्य छात्रों के अध्ययन में बाधा खड़ी करता है, यह विकर्म है।

नियत कर्म क्या है? व्यक्ति के कर्म यज्ञस्वरूप होने चाहिए। यज्ञ, कृतज्ञता प्रकाशन की सांकेतिक क्रिया है। तैत्तिरीय संहिता (1-7-4) में 'यज्ञो वै विष्णु:' कहा गया है। इससे चार अर्थ निकलते हैं-

1. विष्णु अर्थात् ईश्वर समर्पित बुद्धि से कर्म करें।
2. 'यज्ञ' शब्द 'युज्' धातु से व्युत्पन्न है, इसका तात्पर्य-देवपूजा, एक साथ एकत्रित करना, दान है। देवी सम्पदा युक्त व्यक्ति देव, उनका सत्कार, सम्मान, ऐसी सज्जन शक्ति का संगठन व समाज हित में दान।
3. विष्णु अर्थात् पालनकर्ता। वे समस्त कार्य जिनसे प्रकृति के समस्त घट पुष्टि को प्राप्त होकर लोगों को वांछित फल प्रदान करते हैं।
4. यज्ञ, त्याग और ग्रहण की क्रिया होने से परस्परावलम्बी जीवन का प्रेरक है।

कर्त्तव्य कर्म

यज्ञ, शेष का भोग अर्थात् जिनके प्रति कर्त्तव्य है उसकी पूर्ति, उनका दाय भाग देने के बाद जो शेष बचता है उसका भोग करना। उपनिषद् में इसी बात को 'तेन त्यक्तेन भुंजीथा' (त्यागपूर्वक भोग) के रूप में वर्णन किया है। मनुष्य नामक जीव सृष्टि का सबसे अधिक परावलम्बी प्राणी है अत: उस पर परिवार, समाज से लेकर नि:सर्ग तक का सर्वाधिक उपकार है, वह सबसे अधिक ऋणी है। भारतीय नीति परम्परा में पाँच ऋण माने गये हैं- ऋषिऋण, पितृऋण, देवऋण, भूतऋण और नृऋण। इन ऋणों से उऋण होने के लिए गृहस्थ के लिए अवश्यमेव करणीय कर्त्तव्यों का विधान किया गया है, जिन्हें पंच महायज्ञ कहते हैं।

अध्यापनं ब्रह्मयज्ञः पितृयज्ञस्तु तर्पणम्।
होमो दैवो बलिर्भौतो नृयज्ञोऽतिथि पूजनम्।।

(मनु. 3-70)

ऋषि ऋण से मुक्ति के लिए ब्रह्म यज्ञ है अर्थात् अपने अर्जित ज्ञान को बाँटना, अगली पीढ़ी को शिक्षा देना। राजस्थानी का एक दोहा है-

भरतां झरतां दुख घणो, लिछमी रो भण्डार।
दोन्यूं आणद ऊपजे, सरस्वती रे द्वार।।

अर्थात् धन संग्रह करते समय व खर्च करते समय कष्ट की अनुभूति होती है किन्तु सरस्वती का भण्डार भरते समय और बाँटते समय दोनों ही अवस्था में आनंददायक होता है।

माता-पिता ने जिस प्रकार पालन-पोषण कर संतति को योग्य बनाया, हम भी अपने कर्त्तव्य का अक्षरश: पालन कर देश-समाज को योग्य पीढ़ी प्रदान करने में सफल हों, यह पितृयज्ञ है।

प्रकृति से प्राप्त अनुदान देवऋण है, प्रकृति की शक्तियों को पुष्ट करने तथा पर्यावरण को संरक्षित संवर्धित करने का कार्य देव यज्ञ है। समस्त प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष लाभ पहुँचाने वाली प्राणियों के भूत ऋण से उऋण होने के लिए भूत यज्ञ है। तब अतिथि सत्कार सहित चींटी, चिड़िया, गाय, कुत्ता आदि सभी जीवमात्र का रक्षण-पोषण करना कर्त्तव्य बन जाता है। मानव समाज का हम पर सर्वाधिक उपकार है, समाज की सम्यक धारणा के लिए सतत् किये जाने वाले कर्म नृ यज्ञ के अन्तर्गत आते हैं। वानप्रस्थी की संकल्पना इसी ऋण को चुकाने के लिए है। कर्त्तव्य कर्म में फल की इच्छा नहीं होती-

तस्मादसक्तः सततं कार्यं कर्म समाचर।
असक्तो ह्याचरन्कर्म परमाप्नोति पूरुषः।।

(गीता 3-19)

इसलिए अनासक्त होकर सदा करणीय कर्त्तव्य-कर्म सुचारू रूप से करता रह क्योंकि अनासक्त होकर कर्म करने वाला मनुष्य परम पद को पा लेता है। ❑

(अनुसंधान अधिकारी,
शैक्षिक प्रौद्योगिकी विभाग, अजमेर)

धर्म चक्र-प्रवर्त्तनाय

❑ प्रो. मधुर मोहन रंगा

प्रत्येक राष्ट्र की सभ्यता, संस्कृति, धरोहर, मान्य परम्पराएँ व वैभवशाली इतिहास होता है। राष्ट्र की एक संस्कृति, सभ्यता व इतिहास होता है, जबकि देश एक भू-भाग है, जिसमें नागरिकों का निवास व उनका एक व्यवस्था के अनुसार शासन होता है। राष्ट्रीय जीवनधारा में राष्ट्रीयता का बोध एक मान्य कर्त्तव्य के आधार पर अनवरत प्रवाहित होता रहता है। परंतु इसके लिए एकत्व के भाव की प्राथमिकता है। यही एकत्व का भाव ही हमें कर्त्तव्य की याद दिलाता है। अत: विश्व के सभी देशों के इतिहास का अध्ययन करने पर ज्ञात होता है कि उनके भौतिक विकास का आधार भी कर्त्तव्य ही रहा है, जबकि भारत ने सम्पूर्ण मानवता का विकास करते हुए, आध्यात्मिक, सामाजिक आर्थिक, शैक्षिक, राजनैतिक उन्नति की है। इसके पीछे एक ही भाव रहा – ''सदा याद रहे कर्त्तव्य''। यही हमारी पूँजी है। भाारतीय जीवन-मूल्यों के अनवरत प्रवाह के पीछे कर्त्तव्य ही एक अदृश्य शक्ति के रूप में, संस्कारों के वाहक का कार्य कर रहा है। नागरिकों को नैतिक रूप से जो कार्य करने चाहिए। उन्हें ''कर्त्तव्य'' कहा गया है। यह एक सामाजिक, प्राकृतिक व नैतिक जिम्मेदारी है। भारत में कर्त्तव्य के लिए धर्म शब्द का प्रयोग करते हुए यह अपेक्षा की गई है कि प्रत्येक व्यक्ति अपने-अपने कर्त्तव्यों का निर्वहन करें। प्राचीन ग्रंथों में भी निर्धारित कर्त्तव्यों को प्रमुखता प्रदान की गयी है। ''धर्म'' की अवधारणा को स्पष्ट करते हुए न्यायमूर्ति एम.रामा जोइस ने अपनी पुस्तक 'भारत का संवैधानिक इतिहास' (खण्ड-1, पृष्ठ 1-4) में लिखा है-''धर्म, समाज के अस्तित्व को जीवित रखता है, सामाजिक क्रम को बनाये रखता है। मानवता की उन्नति के साथ-साथ खुशहाली को निश्चित करता है।''

धारणाद् धर्म इत्याहुर्धर्मो धारयते प्रजा:।
यत् स्याद् धारणसंयुक्तं स धर्म इति निश्चय:।।

(कर्ण पर्व, अध्याय 69, श्लोक 58)

भारत में प्राचीनकाल से ही धर्म अर्थात् कर्त्तव्य पालन को जीवन का आधार माना गाया है। जीवन की गतिशीलता भी कर्त्तव्य में निहित है, कर्मशील व्यक्ति अनवरत अपने दायित्वपूर्ण कार्यों का निष्पादन करता रहता है व दीर्घकालिक जीवन्तता अर्जित करता है। जिस प्रकार सरिता का प्रवाह उसे अत्यधिक ऊर्जा व ऊष्मा प्रदान करता है, इसी कारण उसका प्रवाह रुकता नहीं है, यदि प्रवाह अवरुद्ध होता है, तो उसकी जीवन्तता नष्ट हो जाती है। यही कर्म क्षेत्र में लागू होता है। इसी कारण हमारे पालि ग्रन्थ में लिखा गया है-

धर्म चक्र - प्रवर्त्तनाय।

(ललित-विस्तार अध्याय - 26)

महापुरुषों ने अपनी कर्मनिष्ठा के कारण ही समाज में श्रेष्ठ स्थान प्राप्त किया व प्रतिष्ठा अर्जित की; क्योंकि जब वे कर्म क्षेत्र में कार्यशीलता का उपक्रम कर रहे थे तब हम सो रहे थे। इसी कारण उन्होंने महानता प्राप्त की। इसलिए कहा है कि हर व्यक्ति अपने कर्त्तव्यों का पालन कर सिद्धि प्राप्त कर सकता है।

स्वे स्वे कर्मण्यभिरत: संसिद्धिं लभते नर:।

(श्रीमद्भगवद्गीता, 18-45)

व्यक्ति जब पूरे मनोयोग से अपने धर्म का अर्थात् कर्त्तव्य का पालन करेगा, एक कर्मयोगी की तरह कार्य का निष्पादन करेगा, उस स्थिति में न तो अधिकारों की बात आयेगी और न ही नैतिक मूल्यों के विषय में चर्चा होगी क्योंकि जब कर्त्ता, कर्त्तव्य को निष्ठापूर्वक व सम्पूर्ण सामर्थ्य के साथ निभाता है, उस स्थिति में अधिकार स्वत: ही, कर्त्ता के सामने नतमस्तक होकर अपने उपयोग के लिए आग्रह करते हैं व स्वयं के प्रति (अधिकार) कृतज्ञता का अनुभव करता है। व्यक्ति नियमित व लगन से तभी कार्य या कर्त्तव्य करेगा जब उसमें उच्च आदर्शों की सरिता का प्रवाह होगा। आदर्शों और नैतिक गुणों का व्यक्ति में समावेश पारिवारिक परिवेश, शिक्षा, साहित्य व उचित मार्गदर्शन के द्वारा ही होगा। बालक जब बुजुर्गों के सान्निध्य में पंचतंत्र

व्यक्ति जब पूरे मनोयोग से अपने धर्म का अर्थात् कर्त्तव्य का पालन करेगा, एक कर्मयोगी की तरह कार्य का निष्पादन करेगा, उस स्थिति में न तो अधिकारों की बात आयेगी और न ही नैतिक मूल्यों के विषय में चर्चा होगी क्योंकि जब कर्त्ता, कर्त्तव्य को निष्ठापूर्वक व सम्पूर्ण सामर्थ्य के साथ निभाता है, उस स्थिति में अधिकार स्वत: ही, कर्त्ता के सामने नतमस्तक होकर अपने उपयोग के लिए आग्रह करते हैं व स्वयं के प्रति (अधिकार) कृतज्ञता का अनुभव करता है। व्यक्ति नियमित व लगन से तभी कार्य या कर्त्तव्य करेगा जब उसमें उच्च आदर्शों की सरिता का प्रवाह होगा। आदर्शों और नैतिक गुणों का व्यक्ति में समावेश पारिवारिक परिवेश, शिक्षा, साहित्य व उचित मार्गदर्शन के द्वारा ही होगा।

की कहानियाँ, हितोपदेश, जातक कहानियों या हमारे प्राचीन चिंतन के बारे में सरल व सारगर्भित भाषा में अर्जित करता है, तभी से संस्कारों की नींव रखी जाती है, जो आगे चलकर कर्त्तव्य या धर्म पालन के रूप में बालक में समाहित हो जाती है कर्त्तव्य के सन्दर्भ में हमारे प्राचीन ग्रंथ गीता में लिखा है-

यज्ञार्थात् कर्मणोऽन्यत्र लोकोऽयं कर्मबंधनः।
तदर्थं कर्म कौन्तेय मुक्तसङ्गः समाचार।।

अर्थात् कर्त्तव्य पालन (यज्ञ) हेतु किये गये कर्मों से इतर कर्मों में लगा हुआ व्यक्ति, समुदाय कर्मों में जकड़ जाता है। इसलिए व्यक्ति को आसक्ति-रहित होकर उस निर्धारित कर्त्तव्य के लिए ही कर्त्तव्य धर्म का पालन करना चाहिए। इसी प्रकार **'कर्मण्येवाऽधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन'** (2-47) का मूल भाव ही हमें अकर्मण्यता से कर्मण्यता की ओर प्रेरित करता है। आसक्ति से अनासक्ति की ओर व अधीरता से धीरता की ओर ले जाने का एक उद्घोष है। अतः मनुष्य को अनासक्त भाव से कर्त्तव्य के प्रति समर्पित होकर निष्काम कर्मयोगी की तरह कार्य का सम्पादन करना चाहिए, तभी सफलता प्राप्त होगी।

धर्म वह है, जो मनुष्य के जीवन के सभी क्षेत्रों के लिए प्रेरणा देता है। उरी (कश्मीर) हमले के बाद दो सरहदी क्षेत्रों पर पत्रकारों की रिपोर्ट के अनुसार - बीएसएफ जवानों ने छुट्टी खुद रद्द करवाई और कहा कि अब तो दुश्मन को सबक सिखायेंगे। भारत-पाक बॉर्डर पर चौकसी करती महिला जवान प्रतिपल सजग रहकर देश की श्रेष्ठ प्रहरी का दायित्व निभा रही हैं। राजस्थान के नवलगढ़, दौसा व मध्य प्रदेश के खण्डवा की महिला जवान चार साल से बीएसएफ में हैं, कार्यभार सम्हालने के बाद से सीमा पर तैनात है। रोजाना इनके पास परिवारों के फोन आते हैं। कहते हैं छुट्टी लेकर घर चली आओ, बॉर्डर से ड्यूटी कटवाकर आफिस में लगवा लो परंतु राष्ट्र भक्ति का ज्वार ऐसा कि ''हमेशा याद रहे कर्त्तव्य'' की भावना का पालन करते हुए, घर वालों के परामर्श को नहीं माना व सीमा पर दुश्मन की एक-एक हरकत पर नजर रखती हैं। वास्तव में इनके समर्पण को सलाम है। अभी हाल ही में देश की शीर्ष अदालत ने राष्ट्रगान का सम्मान करने हेतु सिनेमा घरों में इसे बजाना अनिवार्य कर दिया है। साथ ही कहा है कि इस दौरान वे खड़े रहकर इसका सम्मान करेंगे।

राष्ट्रगान के प्रति आदर व सम्मान के भाव रखना हमारा दायित्व है। परंतु यहाँ एक प्रश्न यह भी आता है कि इस प्रकार का आदेश न्यायालय को क्यों निकालना पड़ा? यह चिंता का विषय है; हमें हमारे राष्ट्रीय प्रतीकों, चिन्हों, स्मारकों के प्रति आंतरिक भावों के आधार पर सम्मान करना चाहिये। यह स्वतः प्रेरित भाव होना चाहिये। इसी से कर्म की प्रेरणा को बल मिलता है। हमारी ऐसी कार्यसंस्कृति ही होनी चाहिए। न्यायालय का आदेश उचित है परंतु ऐसी स्थिति आना चिंता का कारण बनता है। जापान में एक धारणा ''करोशी कल्चर'' प्रचलित है, उसके अनुसार वहाँ के नागरकि ऑफिस में ज्यादा घंटों तक कार्य करते हैं। यह उनका कार्य के प्रति समर्पण है। यही भाव राष्ट्र की उन्नति का आधार होता है। हम याद करें, भारत-चीन के 1962 के युद्ध में अपनी वीरता के लिए परमवीर चक्र प्राप्त करने वाले मेजर शैतान सिंह को जिन्होंने 5000 मीटर ऊँचाई पर स्थित चुसूल घाटी में वीरतापूर्वक युद्ध करते हुए 18 नवम्बर, 1962 को अपना कर्त्तव्य निष्ठापूर्वक निभाकर बलिदान दिया। उनके मन में यही भाव रहा होगा ''सदा याद रहे कर्त्तव्य''। इसका यही कारण रहा होगा कि भारतीय जीवन परम्परा में उत्तरदायित्व की भावना की झलक जीवन के हर स्तर पर दृष्टिगोचर होती है। इसी कारण व्यक्ति, समाज व राष्ट्र के मध्य भावनात्मक संबंध बना रहता है। परंतु परिवर्तित होते वैश्विक परिदृश्य ने हमारी ''जीवन शैली'' व ''जीवन'' पर प्रभाव डाला है।

व्यक्ति जब सफलता की सीढ़ियों पर अग्रसर होता है, तब उसकी जीवन शैली पाश्चात्य प्रभाव के कारण प्रभावित होने लगती है। जैसे-उसे कार, बंगला, अच्छे परिधान आदि वैभवपूर्ण जीवन की ओर प्रेरित करते हैं। पाश्चात्य अप-संस्कृति की, ''आयातित-जीवन-दृष्टि'' व उनके व्यवहार को अपना कर तथाकथित आधुनिक लोग अपने आप को सुसंस्कृत मानते हैं। भ्रमित व आभासी चकाचौंध में वह वास्तविक जीवन-ध्येय से विमुख हो जाते हैं क्योंकि ''जीवन'' पर ''जीवन शैली'' अधिक प्रभावी हो जाती है। जबकि वास्तविक जीवन ध्येय तो सात्विक कर्त्तव्य ही है। जीवन-शैली के कारण कर्त्तव्य पथ डगमगाता है। क्योंकि ''जीवन-शैली'' आकर्षण को जन्म देती है। ज्यादातर लोग सफलता को ''जीवन-शैली'' से जोड़ते हैं इसी कारण विचलित होते हैं। सफलता की ऊँचाइयों में जाकर ''जीवन'' व ''कर्त्तव्य'' की समझ का संज्ञान लेकर त्याग, सेवा, समर्पण, धर्म ही हमारा आध्यात्मिक चिंतन है। यही कर्त्तव्य पालन का संदेश देता है। 'स्थितप्रज्ञ' व्यक्ति तो इसे अंगीकार कर कर्त्तव्य को साक्षी मानकर कार्य करते हैं, जबकि अन्य व्यक्ति विचलित हो जाते हैं। अतः आवश्यकता इस बात की है कि हम ''**माता भूमिः पुत्रोऽहं पृथिव्याः**'' जैसी प्रतिज्ञा कर राष्ट्र व समाज के प्रति कर्त्तव्य का निर्वहन करने का संकल्प लें, यही हमेशा हमें पाथेय प्रदान करेगा। ❑

(विभागाध्यक्ष, पर्यावरण विज्ञान विभाग,
सरगुजा वि.वि., अम्बिकापुर, छत्तीसगढ़)

कर्त्तव्य में निहित हैं अधिकार

अपने देश में कर्त्तव्यों के खेत में विकारों की फसल बोयी जा रही है। 'सुमति' पर 'कुमति' हावी है। सारे भारतवासी यह पतन लीला खुली आँखों से देख रहे हैं। उपर्युक्त परिस्थितियों और मन स्थितियों के मध्य भारत के भविष्य की चिन्ता का प्रश्न सभी देशवासियों के चिंतन को झकझोर रहा है। वस्तुतः इस संकट की घड़ी में व्यापक कर्त्तव्य बोध की महती आवश्यकता है। सभी भारतवासियों को अपने-अपने 'कर्मक्षेत्र' को 'धर्मक्षेत्र' समझना होगा। वस्तुतः कर्त्तव्य-बोध सत-कर्म से जुड़ता है तब कर्मयोग बन जाता है। कर्त्तव्य के मार्ग पर चलने वाले व्यक्ति को अधिकार स्वतः प्राप्त हो जाते हैं। शीघ्रातीशीघ्र अपने देश की उन्नति हो, सुख की वर्षा हो तो कर्त्तव्यपरायणता आवश्यक है। कर्त्तव्य-बोध ही हमारी सब समस्याओं का समाधान है और हमारे राष्ट्र के उज्ज्वल भविष्य का मार्ग प्रशस्त करता है।

❑ **सीताराम व्यास**

'कर्त्तव्य में निहित हैं अधिकार' शीर्षक स्वयं में महत्त्वपूर्ण है। हमारे मनीषियों ने कर्त्तव्य को धर्म माना है जो मानव के नैतिक जीवन से संबन्धित है। धर्म व्यक्ति, समाज, राष्ट्र और विश्व में समन्वय और सन्तुलन बनाये रखता है। सामजिक व्यवस्था के नियमन का पर्याय कर्त्तव्य (धर्म) ही है। जब नागरिक अधिकार की माँग करता है तो कर्त्तव्य भी साथ में जुड़ जाता है। दूसरे शब्दों में समाज जीवन में प्रत्येक व्यक्ति कर्त्तव्य का पालन करता है तो उसको अधिकार स्वत: प्राप्त हो जाता है। उदाहरण- मैं कर्त्तव्य का पालन करूँगा तो दूसरे व्यक्ति के अधिकार की रक्षा स्वत: हो जाती है।

गीता में 'कर्म' की व्याख्या में 'कर्त्तव्य' और अधिकार का सुन्दर सटीक वर्णन दिखायी देता है। गीता में भगवान श्रीकृष्ण अर्जुन को लक्ष्य करके कहते है '**कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन**' भगवान् श्रीकृष्ण का आशय यह है कि मनुष्य को 'कर्म' या 'कर्त्तव्य' के सम्यक्-निर्वाह का ही अधिकार है। इस फल की लिप्सा से (मुझे मिलेगा) कर्त्तव्य-निष्ठा की महिमा क्षीण हो जाती है। हमारी परम्परा में सभी ग्रन्थों का वर्णन संवाद के माध्यम से किया गया है। 'संवाद' शब्द में विचार की अभिव्यक्ति का अधिकार सन्निहित है।

गीता में अर्जुन 'संवाद' के द्वारा ही अभिव्यक्ति के अधिकार को प्राप्त करता है। भगवान् श्रीकृष्ण उसके जिज्ञासा-परक अधिकार को मान्यता प्रदान करते हुऐ धैर्य के साथ अर्जुन के प्रश्नों का उत्तर देते रहते हैं और गीता के 18वें अध्याय के समापन में उसको 'अब तेरी इच्छा है वह करो' की स्वतंन्त्रता प्रदान कर देते हैं। ऐसा बेजोड़-कर्त्तव्य और अधिकारों का संबन्ध अन्य कहीं प्राप्त नहीं होता है। भारतीय विचार में अधिकार शब्द नहीं है पर भिन्न-भिन्न प्रसंगों के द्वारा अधिकार-भाव का प्रगटीकरण दिखलायी पड़ता है। जैसे विदुरनीति, वशिष्ठ गीता में संवाद के द्वारा अभिव्यक्ति का अधिकार प्राप्त है।

भारत की चिंतन परम्परा अधिकार और कर्त्तव्य को नैतिकता से जोड़ती है। उसको ही 'धर्म' कहा गया है। लोकहित ही आत्म-कल्याण है। जो व्यक्ति कर्त्तव्य पालन के प्रति सजग है वह अपार यश और ख्याति भी अर्जित करता है। उदाहरण, एक कर्त्तव्यनिष्ठ अध्यापक है तो उसके सारे शिष्य उसके चरण स्पर्श करके गौरव अनुभव करते हैं। वस्तुत: अध्यापन एक नैतिक और आध्यात्मिक कर्त्तव्य है। धर्म के दश लक्षण भी कर्त्तव्य-बोध की अभिव्यक्ति है।

पाश्चात्य विचारक कर्त्तव्य की अपेक्षा अधिकार को महत्त्व देते हैं। सर्वप्रथम यूरोप में लॉक और रूसो के विचारों से प्रेरित फ्रांस की राज्यक्रान्ति ने स्वतन्त्रता, समानता, बन्धुता के अधिकारों को उद्घोषित किया। फ्रांस की राज्यक्रान्ति के डेढ़ दशक तक जनता इन अधिकारों से वंचित रही। पूरा फ्रांस अराजकता, अव्यवस्था की स्थिति में रहा। वहाँ स्वतन्त्रता ने स्वच्छन्दता और समानता ने असमानता का स्थान ले लिया। फ्रांस की राज्य-क्रान्ति ने प्रतिक्रियास्वरूप अधिकारों का जन्म दिया। फलत: प्रतिक्रिया से उत्पन्न अधिकार लोक-कल्याणकारी नहीं हो सके। कुछ समय पश्चात् स्वतन्त्रता और समानता के अधिकारों में विरोधाभास भी दिखायी देने लगा। पश्चिमी विचारकों का मत है कि स्वतन्त्रता समानता का पूरक नहीं है बल्कि विरोधी है।

भारत के संविधान निर्माताओं ने पश्चिम से प्रभावित होकर अधिकारों के सिद्धांत को अपनाया। स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् भारत का नागरिक अधिकारों की माँग करता रहा। उसमें कर्त्तव्य-बोध का भाव विस्मृत होता रहा। नगर के किसी भी छोटे बड़े कार्यालय में जाइए। सर्वत्र काम की टालमटोल दिखायी पड़ेगी। जो प्रामाणिकता से काम करेगा वह बेवकूफ और जो कामचोरी करेगा

वह चतुर, यह आज का सूत्र बन गया। घूस-खोरी, चोरी, धूर्तता, ये सब राष्ट्रजीवन को दीमक की तरह चट कर रहे है। काम के घंटे कम हों, और मजदूरी अधिक मिले इस हेतु कार्य करने वाली अनके संस्थायें अपने देश में है। यहाँ तक प्रजातन्त्र का रक्षक प्रेस भी अर्थ की दौड़ में अश्लील विज्ञापन और सस्ती लोकप्रियता के पीछे राष्ट्रहित को भी भूल गया। अभी एन.डी.टी.वी. ने पठानकोट के सैनिक स्थल पर आतंकवाद के हमले का लाइव टेलीकास्ट किया जो कि राष्ट्रीय कर्त्तव्यों की सरासर अवहेलना थी। जब सरकार एन.डी.टी.वी. पर रोक लगाने लगी तो प्रेस-जगत चिल्लाने लगा कि अभिव्यक्ति के अधिकारों का हनन हो रहा है। यह कैसी विड़म्बना है कि हमारे देश का मीडिया राष्ट्र हित को तिलांजलि दे रहा है? जिस देश का नागरिक कर्त्तव्य को छोड़कर अधिकारों के पीछे दौड़ता है। क्या ऐसा राष्ट्र उन्नति कर सकेगा? नैतिक और राजनीतिक पतन कर्त्तव्य पालन पर प्रहारक है। हमारे यहाँ वैदिक साहित्य में वरुण देवता को 'ऋतस्य गोपा' घोषित किया गया है। इसका आशय है वरुण देव 'ऋत' अर्थात परम या सनातन सत्य के रक्षक हैं। हमारे वैदिक देवता प्रकृति के धर्म की रक्षा का निर्वहन करते हैं। परम आश्चर्य की बात यह है कि राजनीति में भी 'नीति' शब्द संयुक्त है। राजनीति का अर्थ 'राज' अर्थात शासन कार्य की नैतिक प्रणाली। घोर अनर्थ यह है कि अनैतिक भ्रष्टाचारी नेताओं की जय जयकार होती है और धर्मनिष्ठ, कर्त्तव्यपरायण नेताओं को लांछित किया जाता है। इस प्रक्रिया में पूरा समाज भी नैतिक कर्त्तव्य का निर्वाह नहीं कर रहा है, वह भी दोषी है। स्वार्थनिष्ठ भ्रष्ट नेताओं के ही पिट्ठू या पिछलग्गू बनने में भारी आत्मतृप्ति का अनुभव करता है।

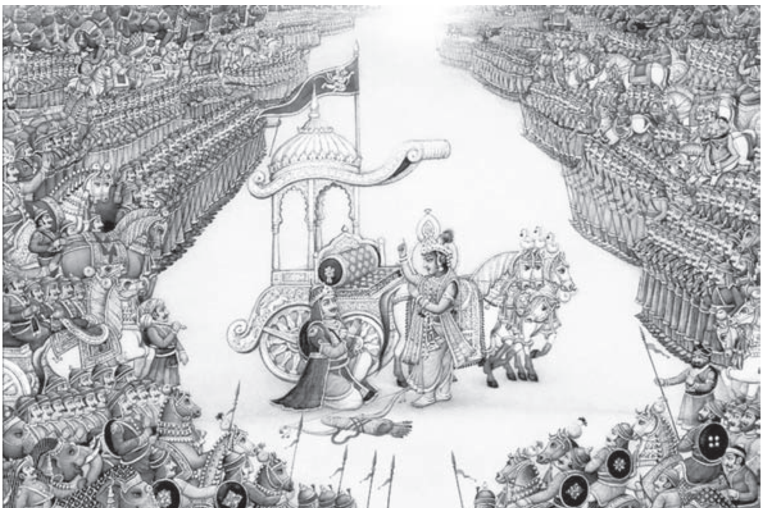

पाश्चात्य विचारक कर्त्तव्य की अपेक्षा अधिकार को महत्त्व देते हैं। सर्वप्रथम यूरोप में लॉक और रूसो के विचारों से प्रेरित फ्रांस की राज्यक्रान्ति ने स्वतन्त्रता, समानता, बन्धुता के अधिकारों को उद्घोषित किया। फ्रांस की राज्यक्रान्ति के डेढ़ दशक तक जनता इन अधिकारों से वंचित रही। पूरा फ्रांस अराजकता, अव्यवस्था की स्थिति में रहा। वहाँ स्वतन्त्रता ने स्वच्छन्दता और समानता ने असमानता का स्थान ले लिया।

अत: नैतिक कर्त्तव्य की सार्वभौम महत्ता को ध्यान में रखते हुए कर्त्तव्यनिष्ठ, सच्चे, ईमानदार, राष्ट्रनिष्ठ नेताओं की जय-जयकार करनी चाहिये।

यदि देश की न्यायपालिका सचमुच न्यायिक कर्त्तव्य का पालन करती है तो वह देश का उद्धार करने में सफल होगी। लेकिन विड़म्बना यह है कि यह वकीलों की बहस और गवाहों पर निर्भर है। न्यायालय का सर्वश्रेष्ठ एडवोकेट वही समझा जाता है जो गवाहों की झूठी गवाहियों के आधार पर निरपराध को अपराधी सिद्ध करके न्यायिक कर्त्तव्यों की इतिश्री कर देते हैं। निष्पक्ष न्याय और नैतिक कर्त्तव्य का गहरा संबद्ध है। यह विषय सर्वज्ञात है। इस पर गम्भीरता से विचार करने की आवश्यकता है।

वस्तुत: अपने देश में कर्त्तव्यों के खेत में विकारों की फसल बोयी जा रही है। 'सुमति' पर 'कुमति' हावी है। सारे भारतवासी यह पतन लीला खुली आँखों से देख रहे हैं। उपर्युक्त परिस्थितियों और मन स्थितियों के मध्य भारत के भविष्य की चिन्ता का प्रश्न सभी देशवासियों के चिंतन को झकझोर रहा है। वस्तुत: इस संकट की घड़ी में व्यापक कर्त्तव्य-बोध की महती आवश्यकता है। सभी भारतवासियों को अपने-अपने 'कर्मक्षेत्र' को 'धर्मक्षेत्र' समझना होगा।

वस्तुत: कर्त्तव्य-बोध सत-कर्म से जुड़ता है तब कर्मयोग बन जाता है। कर्त्तव्य के मार्ग पर चलने वाले व्यक्ति को अधिकार स्वत: प्राप्त हो जाते हैं। शीघ्राति-शीघ्र अपने देश की उन्नति हो, सुख की वर्षा हो तो कर्त्तव्यपरायणता आवश्यक है। कर्त्तव्य-बोध ही हमारी सब समस्याओं का समाधान है और हमारे राष्ट्र के उज्ज्वल भविष्य का मार्ग प्रशस्त करता है। ❑

(पूर्व प्राध्यापक, महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय, रोहतक, हरियाणा)

'धर्म' की अवधारणा एवं महत्ता

❑ डॉ. बुद्धमति यादव

'मैं धर्माचरण को जानता हूँ परन्तु उसकी तरफ मेरी प्रवृति नहीं, मैं अधर्म को भी जानता हूँ परन्तु उससे मैं अपने आपको मुक्त नहीं कर पा रहा हूँ।' दुर्योधन की भाँति आज के युग का मानव भी जीवन के लक्ष्य से भटक गया है। करणीय को छोड़कर अकरणीय की ओर बढ़ रहा है। प्राचीन सभ्यता और संस्कृति को भूल रहा है। अर्जुन भी कुरुक्षेत्र में कर्म-अकर्म, करणीय-अकरणीय के विषय में विमूढ़ हो गया था, लेकिन उसे श्रीकृष्ण जैसे गुरु का मार्गदर्शन प्राप्त हुआ, जिसके कारण वह कर्तव्य पथ पर अग्रसर होने के लिए सही मार्ग का चयन कर सका और पुण्य का भागी हो सका। इसके विपरीत दुर्योधन जैसे अनेक 'दिशा हीन' लोग भी समाज में हैं, जिन्हें उचित समय पर, उचित मार्गदर्शन नहीं मिल पाता और वे जीवन भर गलत दिशा पाकर पाप के भागी बन जाते हैं। स्वयं का, समाज का और देश का अहित करते हैं।

भारतीय समाज धर्म-प्राण समाज रहा है और यहाँ धर्म को प्रत्येक क्षेत्र में महत्ता प्राप्त होती रही है। धर्म, व्यक्ति, परिवार, समाज और सम्पूर्ण राष्ट्र के जीवन को अगणित रूपों में प्रभावित करता रहा है। यहाँ भौतिक सुख प्राप्ति को जीवन का परम लक्ष्य नहीं मानकर धर्म संचय को ही परम लक्ष्य माना गया है। भारतीय संस्कृति में 'हमारा क्या अधिकार है? इस बात पर बल नहीं दिया है, बल्कि हमारा क्या कर्त्तव्य है- इसको महत्त्व दिया है। यही कारण है कि यहाँ कर्त्तव्य को 'धर्म' के रूप में स्वीकार किया गया है। 'धर्म' को आचरण के माध्यम से ही धारण किया जा सकता है। इस हेतु मनुस्मृति में व्यक्ति के जीवन में धर्म के दश लक्षणों का होना अनिवार्य माना गया है-

धृतिः क्षमा दमोस्तेयं शौचमिन्द्रियनिग्रहः।
धीर्विद्या सत्यमक्रोधो दशकं धर्मलक्षणम्।।

इन दश लक्षणों के द्वारा मानव 'सामान्य धर्म' का अपने सम्पूर्ण जीवन में कर्त्तव्यों के रूप में पालन करता है। इसके कारण परिवार के सदस्यों में परस्पर कर्त्तव्य भावना जागती है। पारिवारिक प्रेम और त्यागपूर्ण जीवन जीने की प्रेरणा, समाज के नैतिक मूल्यों के प्रति आस्था, सद्‌गुणों का विकास करने तथा चरित्र निर्माण में निश्चित रूप से सहायता मिलती है। कुछ 'विशिष्ट कर्त्तव्यों', का उल्लेख भी 'धर्म ग्रन्थों' में मिलता है यथा - आश्रम धर्म, वर्ण धर्म, कुल धर्म, राज धर्म, युग धर्म, मित्र धर्म और गुरु धर्म। 'रामायण' में विशिष्ट कर्त्तव्यों का जितना विषद् और मर्यादित स्वरूप उपलब्ध है, उतना अन्यत्र कहीं नहीं। माता-पिता के प्रति कर्त्तव्य, भाई के प्रति स्नेह, समाज के प्रति अनुराग, असत्य के प्रति कठोर और सत्य के प्रति प्यार, इन सबके द्वारा आदर्श परिवार, आदर्श समाज, आदर्श राष्ट्र की स्थापना का प्रयास किया गया है। अत: तत्कालीन समाज में कर्म ही मनुष्य की पहचान बन गया, इस हेतु मनुष्य से सदकर्मों

की आशा करते हुए कहा गया है - '**कर्म प्रधान विश्व रचि राखा। जो जस करइहो तस फलु चाखा।**' इन कर्त्तव्यों के अतिरिक्त 'आपद्धर्म' का भी धर्म ग्रन्थों में प्रावधान है। जब व्यक्ति के कर्त्तव्यों की दृष्टि से दो धर्मों के बीच टकराव की स्थिति पैदा हो जाए तो अधिक महत्त्वपूर्ण धर्म या दायित्व के निर्वाह के लिए दूसरे धर्म के नियमों को कुछ समय के लिए छोड़ देना ही आपद्धर्म है। आपद्धर्म के नियमों के अन्तर्गत व्यक्ति को अपने प्राणों की रक्षा हेतु किसी भी प्रकार का आचरण करने की स्वीकृति दी गई है यथा- युधिष्ठिर द्वारा गुरु द्रोणाचार्य के समक्ष सत्य को छिपाने का प्रयास करते हुए कहना कि -

'अश्वत्थामा हतो। नरो वा कुंजरः।।'

धर्म अथवा कर्त्तव्य के तीनों स्वरूपों में इस बात पर आग्रह है कि व्यक्ति को क्या करना चाहिए? न कि हमें क्या मिलना चाहिए। जब व्यक्ति में 'अधिकार' पाने की भावना जागती है, तो उसमें 'स्वार्थ' प्रबल हो उठता है, फिर उसमें 'लेने' और 'पाने' की लालसा पैदा हो जाती है, जो परिवार, समाज और देश के टूटने का कारण बनता है। 'महाभारत' में अधिकार, स्वार्थ और पाने की

लालसा का जैसा अद्भुत वर्णन किया गया है, वह अन्यत्र दुर्लभ है। 'अधिकार' पाने की 'अति' ने ही मानव समाज को महाभारत जैसी विध्वंसक स्थिति में ला खड़ा किया। ऐसी ही स्थिति के लिए महाभारत की ये पंक्तियाँ यहाँ उद्धृत हैं–

यदा यदा ही धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत।
अभ्युत्थानमधर्मस्य तदात्मानं सृजाम्यहम्।।

अर्थात् 'हे भारत! जब जब धर्म की हानि होती है और अधर्म की वृद्धि होती है, तब तब मैं अपने रूप में प्रकट करता हूँ।'

भारतीय संस्कृति में 'देने' के भाव को महत्त्व दिया गया है। यही भाव व्यक्ति को परिवार, समाज और राष्ट्र से जोड़ता है। श्रीमद्‌भगवदगीता के द्वारा श्रीकृष्ण ने सम्पूर्ण मानव जाति को 'कर्मयोग' का सन्देश देकर सदैव कर्मरत रहने को प्रेरित किया। श्रीकृष्ण ने धर्म के दो भेद बताये हैं – आसक्त कर्म और अनासक्त कर्म। प्राय: मनुष्य आसक्ति के कारण ही कोई कर्म करता है। आसक्ति पर विजय प्राप्त कर तथा फल की कामना का त्याग करके ही व्यक्ति को धर्म करना चाहिए, तभी वह अनासक्त धर्म कहलाता है। आसक्त कर्म ही 'सकाम' कर्म है, जिसमें व्यक्ति की फल पाने की इच्छा होती है और अनासक्त धर्म 'निष्काम' कर्म कहलाता है क्योंकि व्यक्ति में कर्म का फल पाने की इच्छा नहीं रहती। यही निष्काम कर्मयोग गीता का प्रमुख संदेश है–

कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन।
मा कर्मफल हेतुर्भूर्मा ते सङ्गोऽस्त्वकर्मणि।।

साहित्य भारतीय संस्कृति का एक अभिन्न अंग है, क्योंकि यह संस्कृति के विचारों और आदर्शों को सुरक्षित रखता है। साहित्य ऐसी संजीवनी है जो निष्प्राण एवं जर्जर होती मानवता की रक्षा करने में सहायक होती है। संतों की वाणी ने मानव धर्म को विश्व धर्म बनाने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई है। उनके अनुसार सच्ची शिक्षा मनुष्य को विनम्र बनाती है और सबसे प्रेम करना सिखाती है। उन्होंने सम्पूर्ण मानवता का आधार प्रेम को मानते हुए कहा है –

पोथी पढ़ि पढ़ि जग मुआ पंडित भया न कोय।
ढाई आखर प्रेम का, पढ़े सो पंडित होय।।

तुलसीदास भारतीय संस्कृति के पोषक माने जाते हैं। वे भी मनुष्य को मानव धर्म का निर्वाह करने की बात करते हुए कहते हैं –

परहित सरिस धर्म नहिं भाई।
परपीड़ा सम नहिं अधमाई।।

जयशंकर प्रसाद ने अपनी महाकाव्यात्मक कृति 'कामायनी' में मनु के द्वारा इसी तरह के विचार व्यक्त किए हैं –

सबकी सेवा न परायी,
वह अपनी सुख संसृति है।
अपना ही अणु अणु कण-कण,
द्वयता ही तो विस्मृति है।।

औद्योगीकरण, नागरीकरण, पाश्चात्य मूल्यों के प्रसार, शिक्षा के बढ़ते हुए प्रतिशत और प्रजातांत्रिक राजनीतिक व्यवस्था तथा सरकारी नीतियों ने समाज को परम्परावाद से आधुनिकीकरण की ओर बढ़ने में सहायता पहुँचायी है। आज व्यक्ति पर विज्ञान और प्रौद्योगिकी का प्रभाव बढ़ता जा रहा है, जिससे आज का व्यक्ति धर्म के नाम पर पाखण्डवाद को और अधिक सहन करने को तैयार नहीं है। परिणामत: व्यक्ति कर्त्तव्य के प्रति विमुख और अधिकार के प्रति सचेत होता जा रहा है। 'स्वहित' के सम्मुख 'परहित' का कोई महत्त्व नहीं। कुछ इसी तरह की अभिव्यक्ति महाभारत में दुर्योधन के कथन से स्पष्ट होती है–

जानामि धर्मं न च में प्रवृत्ति।
जानाभ्याधर्मं न च में निवृत्ति।।

अर्थात् 'मैं धर्माचरण को जानता हूँ परन्तु उसकी तरफ मेरी प्रवृति नहीं, मैं अधर्म को भी जानता हूँ परन्तु उससे मैं अपने आपको मुक्त नहीं कर पा रहा हूँ।'

दुर्योधन की भाँति आज के युग का मानव भी जीवन के लक्ष्य से भटक गया है। करणीय को छोड़कर अकरणीय की ओर बढ़ रहा है। प्राचीन सभ्यता और संस्कृति को भूल रहा है। अर्जुन भी कुरुक्षेत्र में कर्म-अकर्म, करणीय-अकरणीय के विषय में विमूढ़ हो गया था, लेकिन उसे श्रीकृष्ण जैसे गुरु का मार्गदर्शन प्राप्त हुआ, जिसके कारण वह कर्त्तव्य पथ पर अग्रसर होने के लिए सही मार्ग का चयन कर सका और पुण्य का भागी हो सका। इसके विपरीत दुर्योधन जैसे अनेक 'दिशा हीन' लोग भी समाज में हैं, जिन्हें उचित समय पर, उचित मार्गदर्शन नहीं मिल पाता और वे जीवन भर गलत दिशा पाकर पाप के भागी बन जाते हैं। स्वयं का, समाज का और देश का अहित करते हैं।

अत: आवश्यकता इस बात की है कि हम सभी नि:स्वार्थ भाव से अपने-अपने धर्म का पालन करें और भावी पीढ़ी को सही दिशा, सही मार्गदर्शन देकर पुण्य का भागी बनाए, पाप का नहीं। यह कर्त्तव्य माता-पिता और शिक्षक भली भाँति पूरा कर सकते हैं। अच्छे नागरिक के नाते प्रकृति के उपादानों से शिक्षा लेकर जीवन को सार्थक बना सकते हैं। प्रकृति हमें अपने लिए नहीं, दूसरों के लिए, समाज के लिए जीना सिखाती है। ऐसा करके ही हम अपने पूर्वजों के उपकार के ऋण से उऋण हो सकेंगे। श्रीमद्‌भगवद् गीता में भी कहा गया है कि स्वकर्म ही स्वधर्म है। स्वधर्म के आचरण से सिद्धि की प्राप्ति होती है –

'स्व-स्वे कर्मण्यभिरतः संसिद्धिं लभते नरः।'

ऐसा करने से ही मानव कल्याण सम्भव है –

सर्वे भवन्तु सुखिनः
सर्वे सन्तु निरामया
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु,
मा कश्चित् दुःख भाग भवेत्।

(व्याख्याता, हिन्दी, जी.डी. गर्ल्स कॉलेज,
अलवर, राजस्थान)

वैश्विक कर्त्तव्य और गीता

❑ विष्णुप्रसाद चतुर्वेदी

गीता से प्रेरित होकर ही महात्मा गाँधी ने रामराज्य का सपना देखा था। सबको प्रसन्न करने हेतु महात्मा गाँधी ने ग्राम स्वराज्य का मार्ग चुना था। संयुक्त राष्ट्रसंघ के उपभोक्तावादी मार्ग से महात्मा गाँधी का मार्ग भिन्न है। भारतीय संस्कृति में इस कहावत की गहरी पैठ है कि संतोषी सदा सुखी। विकास के नाम पर एक अनन्त उपभोक्तावादी भूख जगाने का प्रयास किया जा रहा है। यह भूख कभी मिट नहीं सकती और चित्त की प्रसन्नता भी उत्पन्न हो नहीं सकती। आजकल फिनलैण्ड प्रभावी शिक्षा प्रणाली के कारण चर्चा में है। फिनलैण्ड के लोग कम में काम चलाने में विश्वास करते हैं इसी कारण प्रसन्न है। चित्त की प्रसन्नता को प्राप्त करने में भूटान का सकल राष्ट्रीय प्रसन्नता सूत्र गीता के अधिक समीप लगता है।

कामना रहित होकर किया जाने वाला कर्म ही कर्त्तव्य है। कर्त्तव्य आन्तरिक प्रेरणा से होता है बाहर से किसी प्रकार का निर्देश नहीं होता। कर्मफल की इच्छा से ही निर्देश उत्पन्न होता है, यह निर्देश ही सभी बुराइयों की उत्पति का कारण होता है। कर्त्तव्य क्या है और कर्त्तव्य का निर्वाह कैसे किया जा सकता है? इन्हीं प्रश्नों का उत्तर देने के लिए श्रीमद्‌भगवद् गीता जैसे महान ग्रन्थ की रचना की गई है। श्रीमद्‌भगवद् गीता को किसी व्यक्ति, जाति या धर्म विशेष के प्रसंग में नहीं देखकर पृथ्वी पर उपस्थित सम्पूर्ण सृष्टि के सन्दर्भ में देखें तो गीता में की गई उद्घोषणा सत्य होने का समय आ गया है-

यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत।
अभ्युत्थानमधर्मस्य तदात्मानं सृजाम्यहम्।।

भारत में सनातन धर्म को ही महत्त्व दिया गया है। सनातन धर्म का अर्थ सृष्टि के सुचारू संचालन के नियमों से रहा है। गीता में उल्लेखित 'धर्मस्य ग्लानिर्भवति' को सृष्टि के सुचारू संचालन के नियमों की अवहेलना कहें तो एक बार फिर वही स्थिति बन गई जो गीता का उपदेश देने के समय में थी। गौर से देखें तो गीता उपभोक्तावाद के विरोध में लिखा गया ग्रन्थ है। मानवीय गतिविधियों के कारण हो रहे पर्यावरण बदलाव, ग्लोबल वार्मिंग की बात करें तो एक बार फिर महाभारत की स्थिति बनी हुई है। विकसित देशों की कौरव सेना के सामने विकासमान देशों की पाण्डव सेना आज भी खड़ी है। हमारा देश भी दो विचार दृष्टियों इण्डिया और भारत, कौरवी व पाण्डवी सेनाओं में बँटा दिखाई देता है। अन्तर है तो इतना कि आज गीता को फिर से कहने की आवश्यकता नहीं होकर उसे अपनाने की आवश्यकता है। गीता के मुख्य उपदेश-

कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन।
मा कर्मफलहेतुर्भूर्मा ते सङ्गोऽस्त्वकर्मणि।।

स्वयं भारत को अर्जुन की भूमिका में रहते हुए गीता के उपदेश को समझने व विश्व को समझाने हेतु उठना होगा। कर्मफल की चिन्ता नहीं करने का उपदेश देने से पूर्व भगवान ने अध्याय दो के श्लोक 42 से 44 में स्वर्ग के सुखों को प्राप्त करने के प्रयास करने वालों को अविवेकीजन कहा है। वेदों में बताए गए सकाम कर्मों का विरोध करते हुए उन्हें नहीं अपनाने का उपदेश अर्जुन को दिया है। आज का उपभोक्तावाद स्वर्ग के सुखों की कामना है। उपभोक्तावादी अपने सुखों के लिए पृथ्वी के शोषण को अपना अधिकार समझते हैं। उनके द्वारा किए जा रहे पाप के कारण पृथ्वी क्रोधित हो मानव सभ्यता को नष्ट करने पर उतारू है। ऐसे में सम्पूर्ण विश्व समुदाय को समझना होगा कि ग्लोबल-वार्मिंग हो या आतंकवाद इन वैश्विक-संकटों के कारण स्वर्ग की कामना से किए जा रहे विनाशक क्रियाकलाप ही हैं।

विश्व नेतृत्व हो या घरेलू नेतृत्व निर्णय लेने वाला कोई न कोई व्यक्ति ही होता है। व्यक्ति के कार्य संकल्पित होने से ही हर प्रकार की बुराई पैदा होती है। अधिक उपभोग की इच्छा से ही व्यक्ति रिश्वत खाता है। देश के विरुद्ध जासूसी करने को तैयार हो जाता है। आज विश्व में चारों ओर कलह की जो स्थिति है उसका कारण संसाधनों पर अधिकार की कामना है। अधिकार संघर्ष की संभावना को बढ़ाता है तो कर्त्तव्य संघर्ष की संभावना को समाप्त करता है। संसार को चलाने लिए कर्म करना आवश्यक है। कर्म, शरीर व सृष्टि को बनाए के लिए है न कि शारीरिक सुखों की रचना करने के लिए है। विश्व में दोनों प्रकार की व्यवस्थाएँ चलती रही हैं। भारतीय संस्कृति में अधिकार को हतोत्साहित कर कर्त्तव्य को प्रोत्साहित किया गया है। वामपन्थ या उपभोक्तावादी संस्कृति से प्रभावित होकर हम भी कर्त्तव्य छोड़ अधिकार की बात करने लगते हैं। विभिन्न विभागों को उनके कर्त्तव्य सिखाने के बजाय लोगों को अधिकार-पत्र बाँटे गए हैं। अधिकार-पत्र बाँटने का कोई लाभ हुआ हो ऐसा नहीं लगता। लोगों के कष्ट दूर करना सरकार का कर्त्तव्य है। राजधर्म भूल कर सरकार जनता से कह रही है कि आपके ये अधिकार हैं, अधिकारों को प्राप्त करने के लिए आप संघर्ष करिए।

कर्म, अकर्म व विकर्म

भारत के महान ग्रन्थ गीता में भगवान श्री कृष्ण ने अर्जुन के माध्यम से मानव मात्र को कर्त्तव्य निभाने का मार्ग बताया है। गीता में कर्मों को त्यागने

की बात नहीं करके कर्मों के फलों को त्यागने पर जोर दिया गया है–

कार्यमित्येव यत्कर्म
नियतं क्रियतेऽर्जुन।
सङ्गं त्यक्त्वा फलं चैव स
त्यागः सात्विको मतः।।

हे अर्जुन शास्त्रों के अनुसार कर्म करना ही कर्त्तव्य है। आसक्ति और फल का त्याग करके किया गया श्रम ही कर्म है। गीता के चौथे अध्याय में कर्म की गति को गहन बताते हुए उसके कर्म, अकर्म व विकर्म तीन प्रकार- बताए गए हैं। उपर से देखने पर सभी कर्म समान दिखाई देते हैं मगर कर्म करने वाले की भावना पर विचार करें तो कर्मों में अन्तर दिखाई देते हैं। सकाम भाव से शास्त्रानुसार किया गया कार्य 'कर्म' कहलाता है। फल की इच्छा किए बिना या अनासित्क भाव से किया गया कर्म 'अकर्म' होता है। जब कार्य करने से किसी व्यक्ति का अहित होता है तो उसे 'विकर्म' कहते हैं। भगवान श्रीकृष्ण गीता में कहते हैं कि कभी-कभी कर्म, अकर्म व विकर्म में भेद करना कठिन होता है। सामान्य लोग ही नहीं विद्वान कभी धोखा खा जाते हैं। स्वामी रामसुखदास जी के अनुसार कर्म, अकर्म व विकर्म में अन्तर कामना की मात्रा का होता है। कामना से कार्य होता है, कामना नहीं होने पर अकर्म होता है तो कामना का अतिरेक होने पर कार्य विकर्म हो जाता है। गीता में सर्वाधिक जोर कामना पर अंकुश लगाना है। कामना बढ़ने के साथ पाप होने की संभावना बढ़ती जाती है। गीता के चौथे अध्याय के 19-23 वें श्लोक में कामना को त्यागने की अपेक्षा करने से पूर्व श्लोक 4-18 में अकर्म का महत्त्व प्रतिपादित किया गया है।

कर्मण्यकर्म यः पश्येदकर्मणि च कर्म यः।
स बुद्धिमान्मनुष्येषु स युक्तः कृत्स्नकर्मकृत्।।

जो व्यक्ति कर्म में अकर्म देखता है और अकर्म में कर्म देखता है वही मनुष्य बुद्धिमान होता है। उसे ही योगी की उपाधि प्रदान की जा सकती है। स्वामी रामसुखदास जी के अनुसार फल की इच्छा नहीं करने से नया राग उत्पन्न नहीं होता और दूसरों के हित में कार्य करने से पुराने राग भी नष्ट हो जाते हैं। सभी प्रकार के राग नष्ट होने से व्यक्ति वीतराग हो जाता है। जब व्यक्ति वीतरागी हो जाता है तो उसके सभी कर्म, अकर्म हो जाते हैं।

गीता में इसके आगे के श्लोकों में दिए स्पष्टीकरण को स्वामी रामसुखदास जी एक उदाहरण द्वारा समझाते हैं। गैराज में खड़ी मोटर में इंजिन नहीं चल रहा (संकल्प या कामना नहीं है) व गति (कार्य) भी नहीं हो रही है। न्यूट्रल गीयर में इंजिन चलाने पर गति नहीं होती अर्थात कामना है मगर कार्य नहीं है। गीयर में लेने पर इंजिन भी चलता है व गति भी होती है, अर्थात् कामना है और कार्य भी हो रहा है। ढलान पर इंजिन बंद करने पर भी गति होती रहती है। स्वामी रामसुखदास जी ने चौथी अवस्था को सबसे अच्छी बताया है, जिसमें कामना नहीं है मगर कार्य होता रहता है। आज का मनुष्य कामनाओं से उत्पन्न तनाव से ही दुखी है। अवसाद के कारण अनेकानेक रोगों का शिकार हो रहा है।

संयुक्त राष्ट्रसंघ विश्व में दुःखी लोगों की बढ़ती संख्या से परेशान है। संगठन ने किसी देश में उपस्थित प्रसन्न लोगों की संख्या के क्रम में विश्व सरकारों की सूची प्रकाशित की है। भारत उस सूची में बहुत नीचे हैं। विश्व संस्था ने विभिन्न सरकारों से अपेक्षा की है कि वे भौतिक संसाधन जुटा कर एक निश्चित अवधि में अपने देश में प्रसन्न लोगों अनुपात बढ़ाने का प्रयास करें। समाज को प्रसन्न रखने का विचार नया नहीं है। गीता में भी प्रसन्नता को लक्ष्य में रखा है मगर प्रसन्नता पाने का मार्ग अलग बताया है-

प्रसादे सर्वदुःखानां हानिरस्योपजायते।
प्रसन्नचेतसो ह्याशु बुद्धिः पर्यवतिष्ठते।।

- गीता 2- 65

चित्त की प्रसन्नता ही स्थाई प्रसन्नता होती है। राग से कामना तथा कामना से सभी प्रकार के दुःख उत्पन्न होते हैं। राग मिटने पर भौतिक वस्तुओं का अभाव व्यक्ति के लिए असुविधाजनक हो सकता है मगर दुःखी नहीं कर सकता। प्रसन्नता मन की ऐसी स्थिति है जिसे अनुभव किया जा सकता परिभाषित नहीं किया जा सकता। वातानुकूलित कक्ष में व्यक्ति सुविधा तो अनुभव कर सकता है मगर वह प्रसन्न भी हो यह आवश्यक नहीं।

गीता से प्रेरित होकर ही महात्मा गाँधी ने रामराज्य का सपना देखा था। सबको प्रसन्न करने हेतु महात्मा गाँधी ने ग्राम स्वराज्य का मार्ग चुना था। संयुक्त राष्ट्रसंघ के उपभोक्तावादी मार्ग से महात्मा गाँधी का मार्ग भिन्न है। भारतीय संस्कृति में इस कहावत की गहरी पैठ है कि संतोषी सदा सुखी। विकास के नाम पर एक अनन्त उपभोक्तावादी भूख जगाने का प्रयास किया जा रहा है। यह भूख कभी मिट नहीं सकती और चित्त की प्रसन्नता भी उत्पन्न हो नहीं सकती। आजकल फिनलैण्ड प्रभावी शिक्षा प्रणाली के कारण चर्चा में है। फिनलैण्ड के लोग कम में काम चलाने में विश्वास करते हैं इसी कारण प्रसन्न है। चित्त की प्रसन्नता को प्राप्त करने में भूटान का सकल राष्ट्रीय प्रसन्नता सूत्र गीता के अधिक समीप लगता है। भूटान टिकाउ -विकास, सांस्कृतिक मूल्यों के संरक्षण व प्रोत्साहन, पर्यावरण संरक्षण व अच्छी शासन व्यवस्था के सूत्रों को पकड़ कर आगे बढ़ रहा है। प्रसन्नता की बात यह कि उपभोक्ता संस्कृति के जनक पश्चिम ने भूटान का उपहास नहीं करके, भूटान के प्रयासों की सराहना की है। महाभारत को टालने के इस प्रयास को आगे बढ़ाने की आवश्यकता है।

भारत, भूटान जैसे मार्ग पर चल कर विश्वगुरु बना था। बिना हथियार के संस्कृति को देश के बाहर दूर दूर तक फैलाने में भारत सफल रहा था। आज हम विकास के सही अर्थ को भूलकर उपभोग के प्रोत्साहित कर रहे हैं। यह राजधर्म की सही अनुपालना नहीं है। बच्चों को अनिवार्यतः गीता पढ़ाने की बात कई बार की जाती है। गीता पढ़ने की नहीं आचरण में उतारने की बात है। बच्चे तो बड़ों को देखकर सीखते हैं। बड़े लोग गीता के अनुरूप आचरण करने लगेंगे तो बच्चों में गीता स्वयं आत्मसात् हो जायेगी। स्वामी विवेकानंद के अनुसार गीता का सार यही है कि मोह रूपी हृदय की दुर्बलता को छोड़ कर झूठे सुखों के त्यागने के युद्ध के लिए खड़े हो जावें।❑

(बाल एवं विज्ञान विषयक लेखक)

मानव जन्म की महत्ता वर्णित करते हुए चाणक्य नीति में कहा गया है कि दुनिया की हर चीज यथा नष्ट हुआ धन, मित्रता, स्त्री, भू-सम्पत्ति, देश पुनः प्राप्त हो सकती है किन्तु मानव जन्म बड़ी मुश्किल से प्राप्त होता है अतः सभी मनुष्यों को शुभ एवं अच्छे कर्म करने चाहिए। कर्त्तव्य क्या है ? अनेक सार्वभौमिक संज्ञाओं की भाँति कर्त्तव्य की व्याख्या भी मुश्किल है। कर्त्तव्यों के संबंध में अलग-अलग धर्मों की भिन्न-भिन्न धारणाएँ हैं किन्तु सभी धर्मों का एक सार यह है कि कर्त्तव्यों का पालन हमें उन्नत एवं महान बनाता है। अकर्मण्यता हमें पतन की ओर ले जाती है। जीवन की विभिन्न अवस्थाओं तथा देशकाल के अनुसार कर्त्तव्य कर्म निश्चित होता है। सैनिक दुश्मन को मारकर अपने कर्त्तव्य और धर्म का पालन करता है। जबकि जीव मात्र की रक्षा हम सभी का कर्त्तव्य है, धर्म है।

कर्त्तव्य पालन - चेतना एवं चरित्र

❑ **प्रो.अल्पना कटेजा**

मनुष्य की यह सामान्य प्रकृति है कि उसे अपने अधिकार अधिक प्रिय होते हैं। प्राय: कर्त्तव्यों की अवहेलना उसकी चेतना में भी नहीं आती, उतना ही विरल है किसी अधिकार की अप्राप्यता सहन करने का धैर्य। अधिकार एवं कर्त्तव्य उन दो पैरों के समान है जिनसे व्यक्ति एवं समाज आगे बढ़ता है। क्रिया में कभी अधिकार आगे होंगे तो कभी कर्त्तव्य किन्तु कोई भी समाज किसी एक ही पैर के सहारे पुष्पित एवं पल्लवित नहीं हो सकता। आज जब मानव सभ्यता कला, संगीत, विज्ञान, तकनीक इत्यादि सभी मोर्चों के उत्कर्ष पर है, कर्त्तव्यों एवं अधिकारों का दुरूह गतिरोध अबोध्य एवं असामञ्जस्यकारी है। 1947 में जूलियन हक्सले जो यूनेस्को के डायरेक्टर जनरल थे, ने महात्मा गाँधी जी को पत्र लिखकर मानवाधिकारों पर अपने दार्शनिक विचार भेजने का आग्रह किया। गाँधीजी ने पत्र के जवाब में लिखा कि ''मैंने अपनी अनपढ़ किन्तु बुद्धिमान माँ से सीखा है कि कर्त्तव्यों का बखूबी निर्वहन करके सभी अधिकारों की प्राप्ति एवं सुरक्षा की जा सकती है''। इससे पूर्व 1909 में राजनैतिक सिद्धान्तों के श्रेष्ठ कृति ''हिन्द स्वराज'' में भी गाँधीजी नागरिकों के मूल अधिकारों की लड़ाई और कर्त्तव्यों की चिंता न करने पर अपना दु:ख प्रकट कर चुके थे। द्वितीय विश्व युद्ध के समय एच.जी. वेल्स ने नागरिक अधिकारों पर तैयार किये जा रहे बिल (कानून) पर गाँधीजी से समर्थन माँगा था तो उनका परामर्श था कि विश्व के समस्त नागरिकों के लिए एक कर्त्तव्यों का घोषणा पत्र तैयार किया जाये। कर्त्तव्य साधन है अधिकारों की प्राप्ति का किन्तु अधिकारों का भोग करते समय अधिकांशत: उससे जुड़े कर्त्तव्य को विस्मृत कर दिया जाता है। उदाहरण के तौर पर स्वतंत्र अभिव्यक्ति के अधिकार को लें तो उसके साथ यह आवश्यक है कि हम इस कर्त्तव्य में पीछे न रहें कि हमारी अभिव्यक्ति से किसी व्यक्ति की मानहानि न हो, समाज व देश के लिए घातक न हो। अपने अधिकारों के प्रति सजग होना अच्छा है किन्तु अधिकारों को कर्त्तव्यों से अलग रख कर दुराग्रही होना दुर्भाग्यपूर्ण होता है जीविकोपार्जन की साधना

में माता-पिता द्वारा किये गये त्याग को भूलकर सभी उपलब्ध सुविधाओं पर बच्चे अधिकार समझते हैं यदि माता-पिता के प्यार पर बच्चों का अधिकार होता है तो वे ही बच्चे आगे चलकर वृद्ध माता पिता को सहारा देना अपना कर्त्तव्य क्यों नहीं समझते हैं ?

पुनर्वित्तं पुनर्मित्रं पुनभार्या पुनर्मही।
एतत्सर्वं पुनर्लभ्यं न शरीरं पुनः पुनः।।

मानव जन्म की महत्ता वर्णित करते हुए चाणक्य नीति में कहा गया है कि दुनिया की हर चीज यथा नष्ट हुआ धन, मित्रता, स्त्री, भू-सम्पत्ति, देश पुनः प्राप्त हो सकती है किन्तु मानव जन्म बड़ी मुश्किल से प्राप्त होता है अतः सभी मनुष्यों को शुभ एवं अच्छे कर्म करने चाहिए। कर्त्तव्य क्या है ? अनेक सार्वभौमिक संज्ञाओं की भाँति कर्त्तव्य की व्याख्या भी मुश्किल है। कर्त्तव्यों के संबंध में अलग-अलग धर्मों की भिन्न-भिन्न धारणाएँ हैं किन्तु सभी धर्मों का एक सार यह है कि कर्त्तव्यों का पालन हमें उन्नत एवं महान बनाता है। अकर्मण्यता हमें पतन की ओर ले जाती है। जीवन की विभिन्न अवस्थाओं तथा देशकाल के अनुसार कर्त्तव्य कर्म निश्चित होता है। सैनिक दुश्मन को मारकर अपने कर्त्तव्य और धर्म का पालन करता है। जबकि जीव मात्र की रक्षा हम सभी का कर्त्तव्य है, धर्म है।

योगस्थः कुरु कर्माणि
सङ्गं त्यक्तवा धनञ्जय।
सिद्धयसिद्धयोः समो भूत्वा
समत्वं योग उच्यते।

धर्म का अर्थ होता है कर्त्तव्य। धर्म के नाम पर हम अक्सर सिर्फ कर्मकाण्ड, पूजा-पाठ, तीर्थ-मन्दिरों तक सीमित रह जाते हैं जबकि हमारे ग्रंथों में कर्त्तव्यपरायणता को ही धर्म कहा गया है। अपने कर्त्तव्य को पूरा करने में कभी यश-अपयश और हानि लाभ का विचार नहीं करना चाहिये। बुद्धि को सिर्फ अपने कर्त्तव्य यानि धर्म पर टिकाकर काम करना चाहिये। आज का युवा अपने कर्त्तव्यों में फायदे और नुकसान को नाप तोल करके धर्म विहीन हो रहा है।

विहाय कामान् यः सर्वान्पुमांश्चरति निस्पृहः।
निर्ममो निरहङ्कारः स शांतिमधिगच्छति।।

गीता में भगवान श्रीकृष्ण कहते हैं कि जो मनुष्य सभी इच्छाओं और कामनाओं को त्याग कर ममता रहित और अहंकार रहित होकर अपने कर्त्तव्यों का पालन करता है उसे ही शान्ति प्राप्ति होती है। हम जो भी कर्म करते हैं उसके साथ अपने अपेक्षित परिणाम (फल) को जोड़ लेते हैं। अपने पसन्द के परिणाम की इच्छा हमें कमजोर कर देती है एवं उसकी पूर्ति न होने पर व्यक्ति का मन और ज्यादा अशान्त हो जाता है। तन्मयता से कर्त्तव्यों का पालन मनुष्यों को शान्ति प्रदान करता है। गीता में मनुष्य को फल की इच्छा किये बिना सतत् कर्म के लिए प्रेरित किया गया है। फल की चिन्ता

करने वाला व्यक्ति ही अपने कर्त्तव्य को छोटा-बड़ा समझ कर भाग्य को दोष देता है। अनासक्त के लिए सभी कार्य समान है। उन्नयन का एक ही मार्ग है, हाथ में जो काम है उसे अधिक से अधिक परिश्रम द्वारा तब तक किया जाए जब तक कि वो सर्वोच्च (श्रेष्ठ) दशा में न आ जाये। कर्त्तव्य पालन चरित्र निर्माण की पूंजी है। चरित्र निर्माण की निरन्तर प्रक्रिया में सम्मिलित है व्यक्ति द्वारा किये गये अनेक कामों का जोड़। समुद्र के किनारे खड़े हुए तट भूमि से टकराती हुई लहरों का शब्द सुनकर हम कहते हैं कि वे कितनी गंभीर एवं प्रबल है। एक बड़ी लहर छोटी-छोटी लाखों करोड़ों लहरों से मिलकर बनती है। उनमें से प्रत्येक शब्द करती है परन्तु हम उन्हें पकड़ नहीं पाते। तब वे एक विशाल समष्टि बन जाती है तभी हम उस गर्जन को हम सुन पाते हैं। किसी भी महापुरुष के जीवनवृत्त को देखकर बताया जा सकता है कि उनके द्वारा सतत् रूप से छोटे-छोटे कार्यों का ईमानदार एवं निष्ठापूर्ण निर्वहन ही समष्टि रूप में उन्हें महान बनाता है। स्वामी विवेकानन्द ने भी कहा है कि मन का संकल्प और शरीर का पराक्रम लगाकर कर्त्तव्य पालन करके सफलता प्राप्त की जा सकती है यदि सभी नागरिक अपने कर्त्तव्यों का पालन अपने पद एवं गरिमा के अनुसार व्यवहार करते हुए करेंगे और श्रेष्ठ जन का अनुसरण उसे आदर्श मानकर अन्य लोग भी करेंगे तो निःसन्देह हम एक आदर्श एवं सुन्दर समाज का निर्माण कर पायेंगे। सबसे कठिन काम है अधिकारों का आलाप त्याग कर फल की प्रत्याशा बिना करके कर्त्तव्य निर्वहन। विश्वगुरु भारत ने मानव जाति को यह संदेश हजारों वर्ष पूर्व ही दे दिया था -

कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन।
मा कर्मफलहेतुर्भूर्मा ते सङ्गोऽस्त्वकर्मणि।।

(प्राचार्या, महारानी कॉलेज,
राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर)

ज्ञान युक्त कर्म ही कर्त्तव्य

❑ डॉ. ओम प्रकाश पारीक

बुद्धियोग के समावेश से व्यक्ति में धर्म, ज्ञान, वैराग्य और ऐश्वर्य चार प्रकार की विशेषतायें उत्पन्न हो जाती है अतः ऐसा व्यक्ति अविद्या, अस्मिता, राग द्वेष, अधिनिवेश पाँचो क्लेशों को दूर कर देता है। इसलिये कर्म करने में बुद्धियोग का महत्त्व है हम कर्म करें, किन्तु ज्ञान के साथ करें जब मनुष्य के बल कर्म करता है (बिना जाने) तो वह शोक को ही प्राप्त करता है इस प्रकार बिना कर्म के केवल ज्ञान निष्प्रयोजन और व्यर्थ होता है क्योंकि उसमें कायिक, वाचिक एवं मानसिक तीनों कर्मों का नाश होने से फलतः सुखानुभव का भी नाश हो जाता है अन्ततोगत्वा दुःख ही प्राप्त होता है ऐसे व्यक्ति विद्या और ज्ञान के मिथ्या अभिमान से युक्त होकर कर्त्तव्य कर्मों से विमुख हो जाते है, और घोर अन्धकार में डूब जाते हैं।

कर्त्तव्य शब्द में कृ धातु से तव्यत् प्रत्यय लगा है, जिसका अर्थ है करने योग्य कर्म या उचित कर्म, करने योग्य कर्मों के लिये। श्रीमद्‌भगवद्‌गीता में भगवान श्रीकृष्ण ने कर्म योग का उपदेश दिया है। ऐसे कर्मों के आचरण से जीवन में सार्थकता प्राप्त होती है और अन्ततोगत्वा मोक्ष की प्राप्ति होती है। इसलिये कहा गया है–

''योगः कर्मसु कौशलम्'' अर्थात् कुशलता से किये जाने वाले कर्म ही कर्मयोग है एवं तदनुसार आचरण ही कर्त्तव्य है वही मानव का श्रेयस्कर मार्ग है। कर्म योग में योग शब्द यूज् धातु से धञ्, प्रत्यय लगने पर बनता है जिसका अर्थ है ''जुड़ना'' कुशलतापूर्वक कर्म करने से व्यक्ति श्रेय मार्ग परमात्मा के मार्ग से जुड़ जाता है, अतः वह कर्मयोगी बन जाता है। प्रत्येक जीव में जीवात्मा विद्यमान होती है जिसके दो वैशिष्टय होते हैं। ब्रह्म और कर्म अर्थात् जानने की जिज्ञासा और कर्त्तव्य। इस प्रकार प्रत्येक आत्मा प्रतिक्षण जो कुछ जानती है वह ज्ञान अज्ञात् विद्या है और प्रतिक्षण जो कुछ करती है वह कर्म है जो न जानती है न ही कुछ करती है वह आत्मा नहीं है।

प्रतिक्षणं करोत्यात्मा जानात्यात्मा प्रतिक्षणम्।
न करोति न जानाति यः स नात्मोपद्यते।।

(गीता विज्ञान भाष्य 2/2)

इसलिये गीता में भी सर्वदैव कर्म करते रहने का उपदेश दिया है।

नियतं कुरु कर्म त्वं कर्म ज्यायो ह्यकर्मणः।
शरीरयात्रापि च ते न प्रसिद्ध्येदकर्मणः ।।

(गीता 3/8)

अर्थात् तुम सर्वदैव कर्म करते रहो कर्म न करने से कर्म करते रहना श्रेष्ठ है यदि कर्म नहीं करोगे तो जीवन यात्रा भी संभव नहीं होगी। कर्मों का प्रवाह स्वाभाविक होता है। मनुष्य प्रकृति के तीन गुणों , सत्व, रज, और तम के वशीभूत एक क्षण भी बिना कर्म के नहीं रहता।

न हि कश्चित्क्षणमपि जातु तिष्ठत्यकर्मकृत।
कार्यते ह्यवशं कर्म सर्वः प्रकृतिजैर्गुणैः।।

(गीता 3/5)

इसी प्रकार प्रत्येक प्राणी अपनी पञ्च ज्ञानेन्द्रियों से निरन्तर कुछ न कुछ जानता रहता है। इस प्रकार ज्ञान और कर्म निरन्तर चलते रहते हैं किन्तु आवश्यकता कर्म के साथ ज्ञान के उचित समन्वय की होती है। जहाँ उचित ज्ञान कर्म के साथ संयुक्त होकर श्रेष्ठ मार्ग की ओर ले जाता है वहीं सही ज्ञान के बिना किये गये कर्म अधोगति की ओर ले जाते हैं।

'कर्मों के शास्त्रों में जो प्रकार बताये गये हैं वे हैं– नित्य, नैमित्तिक, काम्य एवं निषिद्ध इन चारों प्रकारों में काम्य एवं निषिद्ध कर्मों को न करने की बात शास्त्रों मे कही गयी है क्योंकि ये कर्म अज्ञान के वशीभूत किये जाते हैं, अतः इनसे अन्तोतगत्वा स्वयं (आत्मा) को कष्ट होता है।

गीता में इस प्रकार के कर्म जो कि हमारा बंधन करते हैं उन्हें मनुष्य एवं समाज के लिये उचित नहीं माना तथा ऐसे कर्मों से बचने के लिये बुद्धियोग का आश्रय ग्रहण करने की बात कही है। बुद्धियोग के समावेश से व्यक्ति में धर्म, ज्ञान, वैराग्य और ऐश्वर्य चार प्रकार की विशेषतायें उत्पन्न हो जाती है अतः ऐसा व्यक्ति अविद्या, अस्मिता, राग द्वेष, अधिनिवेश पाँचो क्लेशों को दूर कर देता है। इसलिये कर्म करने में बुद्धियोग का महत्त्व है हम कर्म करें, किन्तु ज्ञान के साथ करें जब मनुष्य केवल कर्म करता है (बिना जाने) तो वह शोक को ही प्राप्त करता है इस प्रकार बिना कर्म के केवल ज्ञान निष्प्रयोजन और व्यर्थ होता है क्योंकि उसमें कायिक, वाचिक एवं मानसिक तीनों कर्मों का नाश होने से फलतः सुखानुभव का भी नाश हो जाता है अन्ततोगत्वा दुःख ही प्राप्त होता है ऐसे व्यक्ति विद्या और ज्ञान के मिथ्या अभिमान से युक्त होकर कर्त्तव्य कर्मों से विमुख हो जाते है, और घोर अन्धकार में डूब जाते हैं।

अन्धं तमः प्रविशन्ति योऽविद्यामुपासते।
ततो भूयईवते तमो यडविद्याया रताः।।

(ईशोपनिषद् /9)

अर्थात् वे लोग भयंकर अन्धकार में प्रवेश करते हैं जो केवल अविद्या (ज्ञान से विहीन कर्म)

का आश्रय लेते हैं तथा उससे भी अधिक वे व्यक्ति अधिक अन्धकार में प्रविष्ट होते है जो केवल ज्ञान (बिना कर्म) में डूबे रहते हैं इसलिये विद्या (ज्ञान) के बिना कर्म व्यर्थ है तथा कर्मों के बिना विद्या व्यर्थ है। ज्ञान और कर्मों दोनों को समझकर कर्त्तव्य कर्मों के आचरण से व्यक्ति मृत्यु के पार चला जाता है तथा ज्ञान के प्रभाव से अमर हो जाता है और मोक्ष को प्राप्त कर लेता है अत: ईशोपनिषद् में कहा है–

विद्याञ्च अविद्याञ्च यस्तद् वेदोभयं सह।
अविद्यया मृत्युं तीर्त्वा विद्ययाऽमृतमश्नुते।।

(ईशो./11)

मनुष्य का कर्म करते रहने का ही स्वभाव है जब तक जीवन है कर्म निरन्तर चलते हैं किन्तु योगनिष्ठ कर्म करने में विशेष सावधानी की आवश्यकता है। पानी नीचे की ओर स्वयं ही बहता है किन्तु उसे ऊपर की ओर ले जाने के लिये प्रयत्न करने पड़ते हैं। अत: निष्काम कर्म या योगनिष्ठ कर्म करते रहने के लिये उपनिषद् में स्पष्ट रूप से कहा है–

कुर्वन्नेवेह कर्माणि जिजीविषेच्छतं समा:
एवं त्वयि नान्यथेतोऽस्ति न कर्म लिप्यते नरे।।

(ईशोपनिषद् /2)

अर्थात् यहाँ कर्मों को करते हुए ही सौ वर्षों तक जीने की इच्छा करें, इसके अतिरिक्त कोई अन्य मार्ग नहीं है। कर्म में ही व्यक्ति का ध्यान होना चाहिये, फल में नहीं। इस विधि से किये जाने वाले कर्म मनुष्य को लिप्त नहीं करते। अर्थात् आत्मा में बंधन नहीं करते। बिना आसक्ति के किये जाने वाले कर्मों में उचित रूप से ज्ञान का समन्वय होता है अत: वे ही श्रेष्ठ कर्म और कर्त्तव्य है। प्राणीमात्र में समत्व बुद्धि रखते हुये सभी में आत्मीय दृष्टि से कर्मों का आचरण जीवन के सार्थक उद्देश्यों को प्राप्त करवाने में समर्थ है। इसलिये जो मिले उसे त्याग कर अनासक्ति भाव से भोग करें और किसी के धन व वस्तु पर लालच न करें।

ईशावास्यमिदं सर्वं यत्किञ्च जगत्याञ्जगत्।
तेन त्यक्तेन भुञ्जीथा मागृद्य: कस्यस्विद्धनम्।।

(ईशोपनषिद् /1)

अनासक्त व योगनिष्ठ कर्माचरण मनुष्य को ऊर्ध्व गति प्रदान करता है किन्तु जैसे ही फल की कामना और लोभ लालच से कर्म किये जाते हैं तो मनुष्य अधोगति को प्राप्त करता है। यह एक मनोवैज्ञानिक प्रक्रिया भी है। मानव मनोविज्ञान के सृष्टा एवं सर्वोत्कृष्ट पारखी भगवान श्री कृष्ण ने गीता के प्रसिद्ध श्लोक् में इस प्रक्रिया को व्यक्त किया है–

कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन।
मा कर्मफलहेतुर्भूर्मा ते सङ्गोऽस्त्वकर्मणि

(गीता–2/47)

अर्थात् हे मनुष्य! तेरा कर्माचरण पर ही अधिकार है उनसे प्राप्त होने वाले फलों पर अधिकार नहीं है। इसलिये कर्मों से प्राप्त होन वाले फलों का कारण मत बन और फल में तेरी इच्छा भी नहीं होनी चाहिये। वस्तुत: इस श्लोक में कारण और कार्य की प्रक्रिया की ओर संकेत किया है।

मनुष्य केवल कर्म के कारण है किन्तु फल का कारण उसके द्वारा किये जाने वाले कर्म हैं। इनका क्रम इस प्रकार है–

मनुष्य – कर्म – फल

अत: जिसमें जिस कार्य को करने की क्षमता होती है वह वही कार्य कर सकता है। मनुष्य में केवल कर्म करने की क्षमता है किन्तु फलों का कारण कर्म है फलों को उत्पन्न करने की क्षमता कर्म में है। जब मनुष्य इस मनोवैज्ञानिक प्रक्रिया का उल्लंघन कर अपने द्वारा किये जाने वाले कर्मों की चिन्ता न करके फल प्राप्ति में ही इच्छा रखता है तो उसका ध्यान (मन) कर्मों से छूट जाता है और वह कर्माचरण उत्तम प्रकार से नहीं कर पाता जिससे उत्तम फल की प्राप्ति भी नहीं होती। फल प्राप्ति की अवस्था अकर्म की अवस्था होती है जब कर्म करने के पश्चात् फल की स्थिति आती है तो कर्म प्रवाह रुक जाता है और भोग प्रारम्भ होता है अत: मनुष्य का फल में इच्छा रखने का अर्थ है अकर्म में इच्छा रखना। इस प्रकार फल में ही इच्छा रखने से वह काम, क्रोध, लोभ, मद, मोह आदि बुराइयों के कुत्सित जाल में फँसकर न तो सांसारिक सुखों (फलों) का ही उपभोग कर पाता है और न ही अपनी आत्मा का कल्याण कर उसे नि:श्रेयस (मोक्ष) प्राप्त करवा पाता है। अतएव जो जिसका कारण है उसे उसी का कारण बनना चाहिये। कर्मों का कारण मनुष्य है अत: वह उनका कारण बनें, फलों का कारण उसके द्वारा किये जाने वाले कर्म हैं, इसलिये फल प्राप्ति के कारण कर्म ही बनें, मनुष्य न बनें। यही निष्काम कर्मयोग है।

जब मनुष्य का ध्यान अपने द्वारा आचरणीय कर्त्तव्य कर्मों पर ही रहता है तो उसे जीवन के उद्देश्यों की प्राप्ति सुगम होती है। मानव जीवन का उद्‌देश्य पुरुषार्थ चतुष्ट्‌य (धर्म–अर्थ–काम–मोक्ष) की प्राप्ति करना है। इनमें धर्म का अत्यधिक महत्त्व है इसी कारण उक्त चारों पुरुषार्थों में उसका प्रथमत: उल्लेख है अर्थ और काम धर्म से ही अनुप्राणित होते हैं। धर्म के बिना अर्थ और काम श्रेष्ठ नहीं माने जाते। मोक्ष अर्थात् नि:श्रेयस् की प्राप्ति धर्म मार्ग का अनुसरण करते हुये अध्यात्म में प्रवेश करने पर ही संभव है। गीता में श्री कृष्ण ने कहा है–

धर्माविरुद्धो भूतेषु कामोऽस्मि भरतर्षभ:।

(गीता 7/11)

हे अर्जुन मैं धर्म से अविरुद्ध (धर्म के अनुकूल) काम हूँ, धर्म से ही अर्थ और काम की सिद्धि होती है। इसलिए एकमात्र धर्म के आचरण से ही चारों पुरुषार्थों की प्राप्ति संभव है। इस प्रसंग में महाभारत में महर्षि वेदव्यास ने कहा–

ऊर्ध्वबाहु: विरोम्येष न कश्चित् श्रणोति मे।
धर्मादर्थश्च कामश्च, स किमर्थं न सेव्यते।।

(महाभारत)

अर्थात् मैं हाथ उठाकर कह रहा हूँ कि धर्म से अर्थ और काम की सिद्धि होती है अत: इस धर्म का क्यों नहीं सेवन करना चाहिये किन्तु मेरी बात कोई सुनता ही नहीं। इस प्रकार हमें धर्म के पालन में संलग्न रहना चाहिये धर्मानुसार किये जाने वाले कर्म ही हमारे आचरणीय कर्म हैं क्योंकि धर्म से हमारी आत्मा एवं बुद्धि में ज्ञान का प्रवेश

होता है और ऐसे कर्म हमें श्रेष्ठ मार्ग की ओर ले जाते हैं। धर्म के दश लक्षण माने गये हैं–

धृतिः क्षमा दमोऽस्तेयं शौचमिन्द्रियनिग्रहः।
धीर्विद्या सत्यमक्रोधो दशकं धर्मलक्षणम्।।

मनुस्मृति 6/92

धृति अर्थात् धैर्य, क्षमा अर्थात् सहनशीलता, दम–उदण्डता का न होना, अस्तेय–चोरी न करना, शोच–सभी प्रकार की शुद्धि इन्द्रिय निग्रह– अपनी एकादश इन्द्रियों को उनके विषयों में से नियन्त्रित रखना, धी–उत्तम बुद्धि, विद्या–आत्म ज्ञान, सत्य और क्रोध न करना। धर्म के इन लक्षणों के पालन से मनुष्य की बुद्धि में सात्विकता आती है जिससे शुभकर्म उत्पन्न होते हैं। ऐसे कर्म स्वयं समाज एवं राष्ट्र के लिये उपयोगी होते हैं। हमें क्या करना चाहिये और क्या नहीं करना चाहिये, कर्त्तव्य और अकर्त्तव्य के ज्ञान के लिये हमारे महर्षियों ने सैंकड़ों, हजारों वर्षों पर्यन्त तपश्चर्या एवं साधना करते हुये जिन शास्त्रों को प्रणीत किया है वे शास्त्र ही हमारे लिये प्रमाण हैं।

तस्माच्छास्त्रं प्रमाणं ते कार्याकार्यव्यवस्थितौ।
ज्ञात्वा शास्त्रविधानोक्तं कर्मं कर्तुमिहार्हसि।।

(गीता 16/24)

शास्त्रानुसार धर्म के अनुकूल आचरण कर शुभकर्मों का सम्पादन एवं अशुभ कर्मों का त्याग ही श्रेय मार्ग है। जिन अशुभ कर्मों को त्यागना चाहिये वे कायिक, वाचिक व मानसिक भेद से तीन प्रकार के हैं। चोरी, हिंसा और व्यभिचार ये कायिक अर्थात् शारीरिक अशुभ कर्म हैं। दूसरे के धन के एवं उन्नति के विषय में हानि पहुँचाने का सोच–विचार, दूसरे का अहित होने का विचार करना दूसरे के प्रति निरर्थक आसक्ति रखना ये मानसिक अशुभ कर्म हैं। कठोर वचन, मिथ्याभाषण, चुगली एवं असम्बद्ध प्रलाप (बकवास) ये वाचिक अशुभकर्म हैं। उक्त सभी दशों अशुभ कर्मों को त्याग देना चाहिये।

अशुभकर्मों को छोड़ते हुये मनसा, वाचा तथा कर्मणा धर्म को अपने जीवन में उतार कर आचरण करना ही कर्त्तव्य कर्म है। याज्ञवलक्य स्मृति में भी कहा है कि जो व्यक्ति करने योग्य नहीं करता और न करने योग्य करता है एवं अपनी इन्द्रियों को भी वश में नहीं रखता वह व्यक्ति निश्चित ही पतन को प्राप्त करता है–

विहितस्याननुष्ठानान्निन्दितस्य च सेवनात्।
अनिग्रहाश्चेन्द्रियाणां नरः पतनमृच्छति।।

(याज्ञवलक्यस्मृति 3/216)

धर्म के अनुसार थोड़ा भी आचरण मनुष्य को महान् भयों से मुक्त रखता है अतः गीता में कहा है–

स्वल्पमप्यस्य धर्मस्य त्रायते महतो भयात्।

(गीता–2/40)

ज्ञान के उचित समन्वय से धर्मानुसार कर्त्तव्य जीवन के उन्नायक कर्म है। तैत्तिरीय आरण्यक में विद्या ग्रहण करने के उपरान्त आचार्य द्वारा समावर्त्तन संस्कार के समय समाज में जाकर उस दीक्षित विद्यार्थी के द्वारा पालनीय धर्म एवं आचरणीय कर्त्तव्यों के विषय में अनुशासित किया जाता है–

सत्य बोलो, धर्म का आचरण करो, स्वाध्याय करने में आलस्य मत करो, कुशलता में प्रमाद मत करो, समृद्धि प्राप्त करने में प्रमाद मत करो, स्वाध्याय एवं प्रवचन में आलस्य मत करो, देव और पितृ कार्य में प्रमाद मत करो, माता को देवी समझो, पिता को देव समझो, आचार्यों को देव समझो, अतिथि को देव समझो, जितने भी अभिनन्दनीय कर्म हैं, उनका आचरण करो, निन्दनीय कर्मों का आचरण मत करो। जो हमारे सुचरित्र हैं उनका अनुसरण करो, दूसरों का नहीं। हमारे से श्रेष्ठ का सम्मान करो। श्रद्धा से दान दो, अश्रद्धा से मत दो, हृदय से दान दो, ज्ञानपूर्वक दान दो, यदि तुम्हें अपने कर्मों के आचरण में कोई सन्देह हो तो जो धर्मशील उत्तम पुरुष व्यवहार करते हैं वैसा व्यवहार करो यही अनुशासन है। धर्म सम्मत एवं शास्त्र सम्मत कर्मों के आचरण जैसा हमारे महापुरुषों ने किया है वही हमारे कर्त्तव्य हैं।

सन्देह की स्थिति में ज्ञान ही स्वकर्मों को प्रकाशित करता है और ज्ञान के प्रभाव से किये जाने वाले कर्म ही कर्त्तव्य बन जाते हैं। जब अपने स्वजनों को युद्ध में सम्मुख देखकर अर्जुन को अज्ञानतावश विषाद उत्पन्न हुआ और वह क्षत्रिय धर्म से विमुख होने लगा तब भगवान श्री कृष्ण ने अनासक्त भाव से कर्म करने, जीवन के श्रेय एवं धर्म मार्ग का अनुसरण करने का उपदेश देते हुये उसे कर्तव्य पथ पर उन्मुख किया।

अतः सभी प्राणियों में आत्मीय दृष्टि रखते हुये प्रकृति के उपहारों जैसे शुद्ध वायु, सूर्य का प्रकाश, पिपासा का शमन करने के लिये जल, वृक्षों एवं वनस्पतियों के द्वारा प्रदत्त छाया एवं फल, कृषि के द्वारा प्राप्त भोजन, प्रकृति प्रदत्त पदार्थों से निर्मित्त आवास, ऊर्जा तथा इससे भी अधिक सम्पूर्ण प्राकृतिक अनुशासन एवं सुव्यवस्था से प्राप्त जीवन को अभय एवं अन्यान्य अनन्त प्रकृति के द्वारा प्रदान किये जाने वाले पदार्थों के प्रति कृतज्ञता का भाव रखते हुये सम्पूर्ण प्रकृति की रक्षा करने का संकल्प लेकर तदनुसार जीवन धारण करते रहना, हमारे लिये महत्त्वपूर्ण कर्त्तव्य है। अतः मनुष्य को अपने कर्त्तव्य पालन में ही संलग्न रहते हुये सिद्धियाँ प्राप्त होती हैं–

स्वे–स्वे कर्मण्यभिरतः संसिद्धिं लभते नरः।

(गीता–18/45)

समस्त प्राणियों में उस एक परात्पर ब्रह्म की ही सत्ता है उसी से सभी उत्पन्न हुये हैं एवं वही सम्पूर्ण जगत में व्याप्त है। इस प्रकार मानते हुये अपने स्वाभाविक कर्त्तव्यों के आचरण से उस परमात्मा की जो मनुष्य सच्ची सेवा करता है वही मानव जीवन की सच्ची सफलता का मार्ग है।

यतः प्रवृत्तिर्भूतानां येन सर्वमिदं ततम् ।
स्वकर्मणा तमभ्यर्च्य सिद्धिं विन्दति मानवः॥

(गीता–18/46)

अतः आसक्ति के बिना, ज्ञान के उचित समन्वय व कुशलता से किये गये कर्त्तव्य ही योग की अवस्था को प्राप्त करते हैं, यही स्वयं की, समाज की एवं राष्ट्र की उन्नति का श्रेष्ठ मार्ग है। ❑

(व्याख्याता–संस्कृत, रा.स्नातकोत्तर कला महाविद्यालय, चिमनपुरा, जयपुर)

कर्त्तव्यनिष्ठा का सम्मान

वर्तमान शिक्षा की चिन्तनीय और शोचनीय, स्थिति एवं शैक्षिक गुणवत्ता की कमी को देखते हुए शिक्षकों को अपने उज्जवल स्वरूप और पावन गुरु महिमा को पहचानना होगा। गुरु जो जितेन्द्रिय, सत्यनिष्ठ, विनम्र समाज के प्रति कर्त्तव्यनिष्ठ, स्वाध्यायी हो, सभी तत्त्व गुरुत्त्व के हैं। इनके बिना शिक्षक की संकल्पना ही संभव नहीं है। श्री गोलवलकर गुरुजी ने माना कि- '' यदि हम अपने महान् वैश्विक लक्ष्य में सफलता प्राप्त करना चाहते हैं तो हमें पहले अपना श्रेष्ठ उदाहरण कर्त्तव्य निर्वाह का प्रस्तुत करना होगा।'' शिक्षक को अपनी सोच, व्यक्तित्व, जीवनशैली, कर्त्तव्यपरायणता के प्रति सचेत होकर, शिक्षकत्त्व का स्वरूप दर्शाना होगा। श्री रामसुखदासजी ने कहा है कि-जापान, जर्मनी, मलेशिया, इजरायल आदि देशों की उन्नति वहां की जनसंख्या के आधार पर नहीं हुई अपितु वहां के लोगों की कर्त्तव्यपरायणता, आत्मविश्वास, देशभक्ति के गुणों के कारण हुई है।

❑ बजरंग प्रसाद मजेजी

भारतीय संस्कृति प्राचीनतम संस्कृतियों में से एक है, जिसके जीवन-मूल्यों के निर्विवाद वाहक देश के शिक्षक ही रहे हैं, जो अध्ययन -अध्यापन के साथ-साथ समाज के मार्गदर्शक भी रहे हैं। भारतीय संस्कृति में सदैव कर्म की ही पूजा होती आई है, व्यक्ति की नहीं। भारत में कर्त्तव्य को धर्म माना गया है। प्राचीनकाल में ऋषिगण कर्त्तव्य को धर्म मानकर जीवन पर्यन्त पालन करते थे, जिससे उनकी इन्द्रियाँ आयु पर्यन्त शिथिल नहीं होती थी तथा समाज की सेवा कर वे सौ वर्षों तक जीवित रहते थे।''जीवेम शरद: शतम्''। हमारी संस्कृति के तत्त्व कर्त्तव्यार्त्तव्य विवेक पर आधारित है जो हमेशा कर्त्तव्य बोध की शिक्षा देते हुए धर्म पर चलने की शिक्षा देते हैं। जैसा कि श्री कृष्ण ने श्रीमद्भगवद्गीता में अर्जुन को उपदेश देते हुए कहा कि - ''**कर्मण्येवाऽधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन**'' (अध्याय 2 / 47) तेरा कर्म करने में अधिकार है, उसके फल में कभी नहीं। श्रीकृष्ण ने आगे कहा कि तू शास्त्र निहित कर्त्तव्य कर्म कर, क्योंकि कर्म न करने की अपेक्षा कर्म करना श्रेष्ठ हैं तथा कर्म न करने से तेरा शरीर निर्वाह भी सिद्ध नहीं होगा।

नियतं कुरु कर्म त्वं कर्म ज्यायो ह्यकर्मण:।
शरीरयात्रापि च ते न प्रसिद्ध्येदकर्मण:।।

(गीता 3/ 8)

शिक्षक से समाज की जो अपेक्षायें हैं, उसे पूर्ति करने हेतु शिक्षक को अपने कर्त्तव्य का निष्पादन ठीक प्रकार से करना होगा। राजा जनक जिन्हें विदेह कहा जाता है तथा ज्ञानीजन भी आसक्ति रहित कर्म द्वारा ही परमसिद्धि को प्राप्त हुए थे। इसीलिए लोक संग्रह के देखते हुए तू भी कर्म के ही योग्य है अर्थात् तेरा कर्म करना ही उचित है।

कर्मणैव हि संसिद्धिमास्थिता जनकादय:।
लोक संग्रहमेवापि सम्पश्यन्कर्तुमर्हसि।।

गीता 3/20

श्रीकृष्ण ने कर्म में स्वयं की संलग्नता बताते हुए कहा कि- ''यदि कदाचित मैं सावधान न होकर कर्मों में न बरतुँ तो बड़ी हानि हो जाए, क्योंकि मनुष्य सब प्रकार से मेरे ही मार्ग का अनुसरण करते हैं। इसलिए यदि मैं कर्म न करूँ तो ये सब मनुष्य नष्ट भ्रष्ट हो जाये और मैं सङ्करता का करने वाला होऊँ तथा इस समस्त प्रजा को नष्ट करने वाला बनूँ (गीता / 22-23) श्रीकृष्ण ने कहा कि - निष्काम कर्म से इन्द्रियाँ मजबूत बनती है, अन्त:करण शुद्ध होता है, व्यक्ति दीर्घायु होता है। इस समय मनुष्य की अल्पायु के देखने से पता चलता है हम कर्त्तव्य से दूर हट रहे हैं। इसलिए अल्पकाल में ही हमारी इन्द्रियाँ शिथिल हो कर्त्तव्य से दूर हट रही हैं। अर्थात् काम करने योग्य नहीं रहती, जबकि पूर्व में दीर्घायु का अर्थ केवल लम्बी आयु तक जीवित रहना ही नहीं अपितु जीवित रहते हुए अपने समाज के प्रति कर्त्तव्य करते हुए जीवित रहना समझा जाता था। व्यक्ति की श्रेष्ठता जीवन की ऐश्वर्यता, सफलता, सार्थकता, भौतिक वैभव में नहीं वरन् उसके श्रेष्ठ कर्म में निहित होती है। वैदिक ग्रन्थ भी कहते हैं कि -वह मानव, मानव

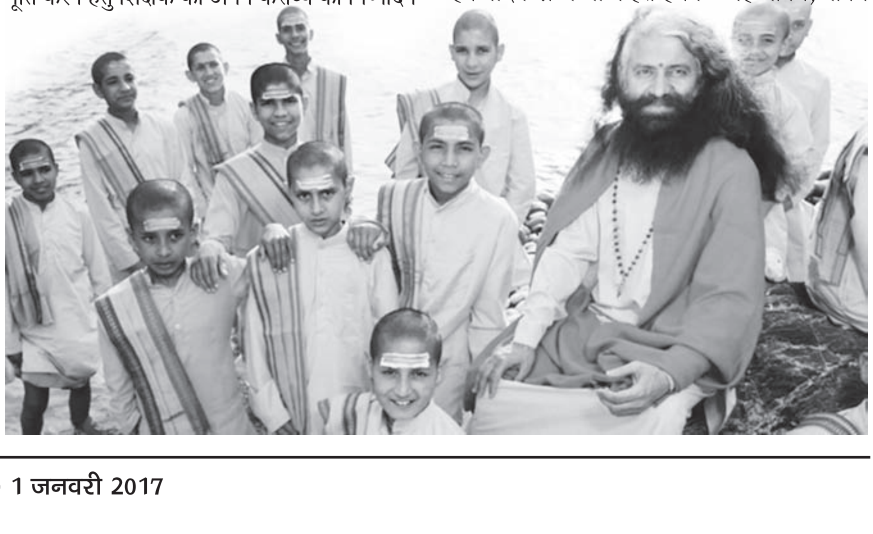

नहीं है जो मानवीय प्रवृत्तियों और मानवीय कर्मों से रहित हो। ऐसे मानव का जीवन भी पूर्णत: निरर्थक है। हम अपना नियत कर्म करें और सफलता को अपनी सहचरी बनाकर जीवन के आनंद से आनंदित हों। इस प्रकार हमें वेदों ने कर्म पथ पर चलने की शिक्षा देते हुए कहा है कि- कर्मशील व्यक्ति के सामने संकट घुटने टेकता है। गोस्वामी तुलसीदास जी ने कहा है कि -

''सकल पदारथ एहि जग माहि, करमहीन नर पावत नाहि'' रामायण में उन्होंने राजधर्म, राजा का प्रजा के प्रति, माता-पिता गुरु के प्रति, बन्धुओं के प्रति, दलित समाज के प्रति, स्त्रियों के प्रति, देश के प्रति कर्त्तव्यों का वर्णन किया है। स्वामी रामतीर्थ ने कहा है कि- यदि तुम सफलता चाहते हो तो कर्त्तव्य का मार्ग, सरिता की तरह निरन्तर गति का अनुसरण करो, जो सदा आगे बढ़ती रहती है, जो सदैव अपने आपको परिस्थितियों के अनुकूल बनाती हुई अपना रास्ता बनाती जाती है। गति ही उसका जीवन है। कार्य, निरन्तर कर्त्तव्य पथ पर चलना ही सफलता का सिद्धान्त है। नित्य प्रति उत्तम से उत्तम बनते जाओ।''शिक्षक को भी हर युग में दायित्व निर्वाह करते जाना है।'' **ज्ञानं भारं क्रियां बिना।**'' अर्थात् कर्म के बिना ज्ञान भार है। शिक्षक को वर्तमान और भविष्य को ज्योतिर्मय करना है। वही सच्चा शिक्षक (गुरु)है, जो अज्ञानता का नाश कर, ज्ञान देता है।

ददाति ज्ञानम् इति गुरुः
गीरति अज्ञानाम् इति गुरुः

शिक्षक राष्ट्र निर्माता है

शिक्षक को राष्ट्र निर्माता कहा जाता है, वो हैं भी, क्योंकि जो नई पीढ़ी रचनात्मक निर्माण के लिए उन्हें धरोहर के रूप में सौंपी जाती है, वही देश का भविष्य है। उसका सोद्देश्य निर्माण ही देश का निर्माण है। नई पौध वैसी ही बनेगी, जैसा उसे शिक्षक बनाएँगे। शिक्षकों में दायित्त्व बोध प्रबल होना चाहिए। उनके कंधों पर बच्चों को, समाज को नई दिशा बोध कराने का भार है। शिक्षक पर नई पीढ़ी के जीवन गठन का गुरुत्तर दायित्व है। शिक्षक की प्रेरणा एवं मार्गदर्शन से छात्र ज्ञानार्जन करते हैं। शिक्षक अपने आचार-विचार से समाज को उचित दिशा प्रदान करता है।

'' आचार्य आचारं ग्राहयति आचिनोत्यर्थान् आचिनोति बुद्धिमिति वा।'' अर्थात् आचार्य की सार्थकता इसी में है कि वह छात्रों में मूल्यपरक आचरण की प्रतिष्ठापना करे। पदार्थ के रहस्य को समझाये, विषयानुकूल बुद्धि का चयन करे अर्थात छात्र की बुद्धि जिस ज्ञान के लिए उपयुक्त है, उसे उसी ओर प्रेरित करे।

वर्तमान में शिक्षक वेतन भोगी, सुविधाओं, सेवाशर्तों के प्रति चिन्तन करता पाया जाता है। वह अपने अधिकारों के प्रति सजग है। किन्तु कर्त्तव्य बोध के प्रति चिन्तित नहीं है। डॉ. राधाकृष्णन का मानना है कि - **''शिक्षक उन्हीं लोगों को बनना चाहिए जो सर्वश्रेष्ठ, योग्य, बुद्धिमान हो।''** उनका स्पष्ट कहना था कि जब तक शिक्षक शिक्षा, शिष्य, समाज के प्रति समर्पित और प्रतिबद्ध होकर कर्त्तव्य निर्वाह नहीं करेगा तथा शिक्षा को मिशन नहीं मानेगा तब तक अच्छी शिक्षा की कल्पना नहीं की जा सकती है। उनका मानना था कि शिक्षक की जिम्मेदारी मात्र छात्र को शिक्षा देना या सिर्फ पाठ्यक्रम पूरा कराना ही नहीं है, उसे अपने विषय का विशेषज्ञ भी होना आवश्यक है। अच्छे शिक्षक के लिए कहा है कि-

चातुर्यवान्विवेकी च अध्यात्मज्ञानवान् शुचिः
मानसं निर्मलं यस्य गुरुत्त्वं तस्य शोभते।

अर्थात् जो चतुर हो, विवेकी हो, अध्यात्म का ज्ञाता हो, पवित्र हो, निर्मल मानस वाला हो, उनमें गुरुत्त्व शोभा पाता है। आज के बदलते परिवेश में शिक्षक को पाठ्यक्रम की पूर्ति, विद्यार्थियों को नवाचार के ज्ञान देने के साथ-साथ सावधानीपूर्वक समुचित मानवीय सम्बन्धों को भी ध्यान में रखना होगा। इसके फलस्वरूप बालकों में अखण्ड-ज्ञान विवेकशीलता, निर्णय लेने की क्षमता का विकास होगा, जो उसे मानवता और प्रकृति के साथ सामञ्जस्य स्थापित करने में सहायक सिद्ध होगा।

राष्ट्र की आवश्यकता-कर्त्तव्यनिष्ठ शिक्षक

वर्तमान शिक्षा की चिन्तनीय और शोचनीय स्थिति एवं शैक्षिक गुणवत्ता की कमी को देखते हुए शिक्षकों को अपने उज्जवल स्वरूप और पावन गुरु महिमा को पहचानना होगा। गुरु जो जितेन्द्रिय, सत्यनिष्ठ, विनम्र समाज के प्रति कर्त्तव्यनिष्ठ, स्वाध्यायी हो, सभी तत्त्व गुरुत्त्व के हैं, इनके बिना शिक्षक की संकल्पना ही संभव नहीं है। श्री गोलवलकर गुरुजी ने माना कि- '' **यदि हम अपने महान् वैश्विक लक्ष्य में सफलता प्राप्त करना चाहते हैं तो हमें पहले अपना श्रेष्ठ उदाहरण कर्त्तव्य निर्वाह का प्रस्तुत करना होगा।**''शिक्षक को अपनी सोच, व्यक्तित्व, जीवनशैली, कर्त्तव्यपरायणता के प्रति सचेत होकर, शिक्षकत्त्व का स्वरूप दर्शाना होगा। श्री रामसुखदासजी ने कहा है कि-जापान, जर्मनी, मलेशिया, इजरायल आदि देशों की उन्नति वहां की जनसंख्या के आधार पर नहीं हुई अपितु वहां के लोगों की कर्त्तव्यपरायणता, आत्मविश्वास, देशभक्ति के गुणों के कारण हुई है। स्वामी विवेकानन्द ने कहा है कि- **प्रत्येक भारतवासी को चाहिए कि वह राष्ट्र सेवा का कर्त्तव्य निर्वाह करे। देश और देशवासियों की सेवा ही हमारा परम कर्त्तव्य है। शिक्षा के लक्ष्य और ध्येय की पूर्ति के लिए आवश्यक है कि शिक्षक क्रमबद्ध सुदृढ़ योजना और क्रियान्विती के लिए प्रतिबद्ध होकर निष्ठापूर्वक कर्त्तव्य की पालना करें।**'' राष्ट्रीय संत चन्द्रप्रभु ने कहा है कि हमें कर्म करना होगा। कर्म से किस्मत के द्वार खोलने होंगे। ऊँचा लक्ष्य, आत्मविश्वास, कड़ी मेहनत, कर्त्तव्य परायणता से सफलता मिलती है। आज शिक्षक अपने दायित्व को विस्मृत करते जा रहे हैं। अत: राष्ट्र की आवश्यकता है-शिक्षक कर्त्तव्यनिष्ठ बनें।

लक्ष्य ओझल न होने पाए,कदम मिलाकर चल,
मंजिल तेरे पग चूमेगी, आज नहीं तो कल।

(शिक्षाविद्, स्वतन्त्र लेखक)

कर्त्तव्य पालन-संस्कृति का मूल तत्व

❑ डॉ. रेखा भट्ट

राष्ट्र की उन्नति के लिये प्रत्येक व्यक्ति के कर्त्तव्य निर्धारित किये गये है। जिसके अन्तर्गत देश के सभी लोग समरसता एवं भातृत्व की भावना रखे। देश की अखण्डता व शांति बनाये रखने का प्रयास करे। सभी क्षेत्रों में उत्कर्ष की ओर बढ़ने तथा ज्ञानार्जन का प्रयास करे। प्राकृतिक पर्यावरण की रक्षा एवं संरक्षण प्रत्येक नागरिक का प्रथम कर्त्तव्य है। भारतीय संस्कृति में निहित मूल्यों के अनुरूप, व्यक्ति निजी स्वार्थों को छोड़कर पारस्परिक सहयोग, समानता, सहिष्णुता एवं कर्मण्यता जैसे कर्त्तव्यों का पालन करें तो सभी जन सुख सम्पन्न होंगे। भारतीय संस्कृति के मूल तत्व कर्त्तव्य पालन के भाव को सदैव स्थायी रखने से ही पूरे समाज एवं विश्व का कल्याण होगा।

वैदिक ग्रन्थों, संहिताओं और स्मृति ग्रंथों के अनुसार अनादिकाल से भारत में कर्त्तव्य शक्ति ही मनुष्य जीवन का आधार रही गई है। इसी आधार पर भारत विश्व में अत्यन्त वैभवशाली राष्ट्र के रूप में विख्यात रहा है। यहाँ के जनमानस में अपने-अपने कर्म क्षेत्र की निपुणता से ही समाज के प्रत्येक व्यक्ति का परिचय था। सामान्य लोगों के जीवन में भी आत्मिक शान्ति का लक्ष्य निर्धारित था। इसकी प्राप्ति के लिये ही लोगों के जीवन मूल्यों में कर्त्तव्य पालन के साथ ज्ञान व भक्ति का भी समावेश किया गया था।

भारतीय मनीषियों ने मोक्ष प्राप्ति अर्थात् जीवन की सद्गति के लिये मनुष्य में कर्त्तव्य परायणता को आवश्यक बताया। साधारणत: मनुष्य लोभ, मोह, अहंकार जैसी मनोवृत्तियों के कारण ही उचित व अनुचित का ज्ञान होते हुए भी अपने यथोचित कर्त्तव्यों का पालन नहीं कर पाता है। उदाहरण के लिए दुर्योधन जैसा योद्धा भी कर्त्तव्यों एवं धर्म युक्त आचरण को जानते हुए भी स्वयं को अधर्मयुक्त कार्यों से विरत नहीं कर पाता है और उसका परिणाम भी हम सभी को ज्ञात है।

मनुष्य जीवन स्वभाव से ही कर्तापन तथा कर्मफल के बोध से प्रवृत्त होता है। यही कर्मफल की आकाँक्षा उसे कर्म बन्धन में बाँधती है इस बन्धन से मुक्ति का एकमात्र उपाय स्वाभाविक कर्म अर्थात् कर्त्तव्य पालन बताते हुए भगवान श्री कृष्ण ने गीता के इस श्लोक में स्वयं कहा है -

स्वे-स्वे कर्मण्यभिरतः संसिद्धिं लभते नरः।
स्वकर्मनिरतः सिद्धिं यथा विन्दति तच्छृणु।।

अर्थात् ''अपने-अपने स्वाभाविक कर्मों में तत्परता से लगा हुआ मनुष्य परम सिद्धि को प्राप्त हो जाता है। अपने स्वाभाविक कर्म में लगा हुआ मनुष्य जिस प्रकार से कर्म करके परम सिद्धि को प्राप्त होता है, उस विधि को तू सुन''।

श्री कृष्ण अर्जुन को कर्त्तव्य का ब्रह्मज्ञान देते हैं और कहते हैं, ''कर्मफल ईश्वर पर निर्भर नहीं करता। व्यक्ति अपनी बुद्धि से अच्छे अथवा बुरे कर्म (कर्म अथवा अकर्म) करने को प्रेरित होता है। मनुष्य की बुद्धि, ज्ञान प्राप्ति द्वारा सत्य व असत्य में अन्तर करने का बोध प्रदान करती है। किन्तु असत्य अर्थात् अकर्म को त्याग करने की भावना वैराग्य से आती है। तभी मनुष्य सत्य का आचरण करते हुए कर्त्तव्य पथ का अनुसरण कर पाता है।''

इस चराचर सृष्टि के अन्य प्राणियों से मनुष्य की भिन्नता उसके कर्त्तव्य पालन के भाव से ही स्पष्ट होती है। कर्त्तव्यों के निर्वहन से व्यक्ति सात्विक गुणों से परिपूर्ण होता है, राजसी व तामसिक गुणों की अपेक्षा देवतुल्य श्रेष्ठता प्राप्त करता है। भारतीय ग्रंथों व धर्म सूत्रों में मनुष्य द्वारा सुखपूर्वक जीवनयापन के लिये शास्त्र विधि से कर्त्तव्यों का निर्धारण किया गया है। व्यक्ति के मुख्य कर्त्तव्य स्वरूप चार पुरुषार्थ बताये गये हैं - धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष। स्पष्ट है कि हम धर्मपूर्वक अर्थोपार्जन करें, अपनी कामनाओं और कर्त्तव्यों का पालन करते हुए मोक्ष प्राप्ति की ओर सदैव अग्रसर हों।

प्राचीन काल से ही भारतीय समाज में परिवार निर्माण को व्यक्ति का प्रमुख कर्त्तव्य माना गया है। परिवार में सामंजस्य बनाये रखने के लिये प्रत्येक सदस्य के कर्त्तव्य निश्चित है। विशेष रूप से माता-पिता अपने निर्दिष्ट कर्त्तव्यों को पूर्ण कर आने वाली पीढ़ी को कर्त्तव्यों की क्रियान्विति के लिये प्रेरित करते हैं। परिवार के वरिष्ठजन परिवार में शुद्ध आचरण द्वारा अनिष्टकारी प्रभावों तथा लक्षणों को दूर करने का प्रयास करते हैं और दीर्घ आयु प्राप्त करते हैं। इसके लिये पाँच कर्त्तव्य निश्चित किये गये हैं - व्रत, सेवा, दान, यज्ञ और संस्कार। इनसे केवल व्यक्ति एवं परिवार ही नहीं सम्पूर्ण समाज लाभान्वित होना है। व्रत द्वारा संयम धारण करना तथा जीवन के सभी संतापों को दूर करने का प्रयास है। सेवा में परिवार व समाज के नि:शक्त,

वृद्धजन एवं दीन-हीन की सेवा सुश्रुषा का कर्त्तव्य निहित है। भारतीय शास्त्रों में दान भी तीन प्रकार के बताये गये हैं - उत्तम, मध्यम व निकृष्ट। राष्ट्र की उन्नति के लिए किया दान उत्तम माना गया है। स्वयं की कीर्ति प्राप्त करने के लिये किया गया दान मध्यम तथा अपने स्वार्थ को पूर्ण करने के लिए किया गया दान निकृष्ट कोटि का माना गया है। सामाजिक जीवन में किए जाने वाले यज्ञ भी पाँच प्रकार के बताये गये हैं- ब्रह्म, देव, पितृ, वैश्व व अतिथि। प्रत्येक यज्ञ के अलग उद्देश्य एवं अलग-अलग फल प्राप्त होते हैं।

भारतीय संस्कृति में मनुष्य को जन्म से लेकर मृत्यु तक व्यक्ति को सोलह संस्कार पूर्ण करने आवश्यक माने गये हैं। मनुष्य इन कर्त्तव्यों का पालन करके ही धर्म के अनुकूल आचरण करता है।

प्राचीन काल में मनुष्य की सौ वर्ष की आयु के अनुरूप कर्त्तव्यों को चार आश्रमों में विभक्त किया गया था। इसके अनुसार जीवन के प्रथम 25 वर्ष की आयु विद्यार्थी के रूप में ज्ञान प्राप्ति व अध्ययन में व्यतीत करनी चाहिये। जीवन का यह प्रारम्भिक काल खण्ड ब्रह्मचर्य आश्रम कहलाया। 25 से 50 वर्ष की आयु गृहस्थाश्रम के लिये निश्चित की गई, जिसमें व्यक्ति पारिवारिक दायित्वों का निर्वहन करता था। वानप्रस्थाश्रम में 50 से 75 वर्ष की आयु निर्धारित थी इस समय व्यक्ति जीवन में अर्जित ज्ञान कौशल का उपयोग करते हुए वह अपना समय समाज के हित में जीवन अर्पण करता था। जीवन का अन्तिम सोपान 75 से 100 वर्ष की आयु संन्यास आश्रम थी जिसमें व्यक्ति आध्यात्मिक उन्नति से मनुष्य जीवन के अन्तिम लक्ष्य ईश्वर प्राप्ति को पूर्ण करता था।

कर्त्तव्यों के समुचित निर्धारण के कारण प्राचीन भारत में सामाजिक व्यवस्था अत्यन्त सुदृढ़ थी। कर्म के आधार पर ही समाज में चार वर्ण माने गये थे। ब्राह्मणों का कर्त्तव्य-शास्त्र अध्ययन, अध्यापन आदि से जुड़े होने के कारण समाज को शिक्षित करना व ज्ञान का मार्ग दिखाना था। क्षत्रियों को युद्ध कार्य में निपुणता होने के कारण समाज की रक्षा का भार सौंपा गया। गणना तथा व्यापारिक कार्यों में संलग्न होने के कारण वैश्य वर्ग को समाज के आय व्यय, व्यवसाय, बही-लेखा आदि कार्य सौंपे गये। सभी प्रकार के सेवा कार्यों में संलग्न होने के कारण शुद्रों को समाज के व्यवस्थार्थ कार्यों का दायित्व दिया गया था। समाज के सभी वर्ण अपने कार्यों को सामाजिक कर्त्तव्य की दृष्टि से संपादित करते थे। धीरे-धीरे सामाजिक विकास एवं समय के साथ लोगों में व्यक्तिगत स्वार्थों एवं अधिकतम लाभ की भावना विकसित होती चली गई। बदलती व्यवस्थाओं में समय के साथ यह प्राचीन सामाजिक व्यवस्था पूर्णत: असंतुलित हो गई।

व्यक्ति अपने कर्त्तव्यों के निर्वहन द्वारा समाज की उन्नति का मार्ग प्रशस्त करता है। जीवन मूल्यों और मान्यताओं के अनुसार कर्त्तव्य करते हुए मानव मन में द्वन्द्व उत्पन्न होता है, किन्तु भारत में धार्मिक आचरण की प्रवृत्ति प्रबल होने कारण सभी में जीवन मूल्यों से जुड़े कर्त्तव्यों का निर्णय करने का दृष्टिकोण बना रहता है।

भारतीय अवधारणा में व्यावहारिक कर्त्तव्यों का अभिवादन रहित निष्पादन उल्लेखित है यही सात्विक एवं निष्काम कर्म का मार्ग है। जबकि पाश्चात्य दर्शन में भी कर्म के ही मार्ग का अनुसरण है, किन्तु वह राजसी एवं सकाम कर्म है। पश्चिमी दर्शन केवल दृश्य एवं व्यक्त आधार पर जगत के भरण पोषण संबंधी नियमों की व्यवहारिक व्याख्या करता है। पाश्चात्य दृष्टि में कर्म मात्र सांसारिक सुखों की प्राप्ति एवं स्वयं के दुख निवारण की इच्छा तक सीमित है। पाश्चात्य के अधिभौतिकता के प्रभाव में भारतीय कर्त्तव्य बोध का परलौकिक दृष्टिकोण व्यवहार संगत नही माना जाता है। अमृतत्व प्राप्ति की स्वाभाविक इच्छा एवं प्रवृत्ति की स्वतंत्रता से मनुष्य में स्वत: कर्त्तव्य का बोध होता है।

वर्तमान में पाश्चात्य प्रभाव के कारण व्यक्ति कर्त्तव्य पालन के सृष्टि के मूल स्वरूप को जानने में असमर्थ है अत: लोगों में सामाजिक व्यवस्था बनाये रखने के लिये पश्चिमी देशों के संविधानों में भी कर्त्तव्यों का नीति निर्धारण किया गया है। पश्चिमी व्यवस्था में सभी लोगों के लिए इन नियमों का पालन अनिवार्य माना गया है। आज भारतीय समाज के सभी क्षेत्रों में भी कर्त्तव्य पालन का भाव लुप्त होता रहा है। हमारे भारतीय संविधान में भी नागरिकों के मूल अधिकारों के साथ-साथ कर्त्तव्यों और नियमों का समावेश किया गया है।

इन नियमों द्वारा राष्ट्र की उन्नति के लिये प्रत्येक व्यक्ति के कर्त्तव्य निर्धारित किये गये है। जिसमें अन्तर्गत देश के सभी लोग समरसता एवं भातृत्व की भावना रखे। देश की अखण्डता व शांति बनाये रखने का प्रयास करे। सभी क्षेत्रों में उत्कर्ष की ओर बढ़ने तथा ज्ञानार्जन का प्रयास करे। प्राकृतिक पर्यावरण की रक्षा एवं संरक्षण प्रत्येक नागरिक का प्रथम कर्त्तव्य है। भारतीय संस्कृति में निहित मूल्यों के अनुरूप, व्यक्ति निजी स्वार्थों को छोड़कर पारस्परिक सहयोग, समानता, सहिष्णुता एवं कर्मण्यता जैसे कर्त्तव्यों का पालन करें तो सभी जन सुख सम्पन्न होंगे। भारतीय संस्कृति के मूल तत्व कर्त्तव्य पालन के भाव को सदैव स्थायी रखने से ही पूरे समाज एवं विश्व का कल्याण होगा।❑

(व्याख्याता रसायन शास्त्र, राजकीय मीरा कन्या महाविद्यालय,उदयपुर)

कर्त्तव्य : समाज का आधार

भारत धार्मिक, सांस्कृतिक और परम्पराओं वाला देश है, यह विविधता में एकता के लिए प्रसिद्ध है। हालांकि, विकास के लिए अस्वच्छता, भ्रष्टाचार, सामाजिक संघर्षों, महिलाओं के खिलाफ अपराधों, गरीबी, प्रदूषण, ग्लोबल वार्मिंग आदि की समाप्ति के लिए अपने नागरिकों को और अधिक प्रयासों की आवश्यकता है। सभी को दूसरों को दोषी ठहराने के बजाय देश के प्रति अपने कर्त्तव्यों को समझना होगा। देश के विकास और उन्नति के लिए सभी लोगों को अपनी अपनी जिम्मेदारी समझनी होगी। लाओत्से तुंग के प्रसिद्ध कथन ''हजारों मीलों की यात्रा एक कदम से शुरू होती है।'' इसके भाव को समझना होगा।

❑ **बजरंगी सिंह**

कर्त्तव्य किसी भी व्यक्ति के लिए नैतिक जिम्मेदारी है, जिसका पालन अपने देश के प्रत्येक नागरिकों को करना चाहिए। हर किसी को सभी नियमों का पालन करने के साथ ही विनम्र और राष्ट्र के प्रति जिम्मेदारियों के लिए उत्तरदायी होना चाहिए। एक व्यक्ति के लिए राष्ट्र एवं समाज के प्रति बहुत से कर्त्तव्य होते हैं। जैसे: आर्थिक विकास एवं वृद्धि, साफ-सफाई, सुशासन, गुणवत्तापूर्ण शिक्षा, गरीबी मिटाना, सभी सामाजिक मुद्दों को हल करना, लैंगिक समानता लाना सभी के प्रति आदरभाव रखना, स्वस्थ युवा देने के लिए बाल श्रम समाप्त करना और भी बहुत से कर्त्तव्य हैं जिनका पालन हमें करना चाहिए।

समाज या देश का नागरिक होने के नाते कुछ कर्त्तव्यों का पालन व्यक्तिगत रूप से भी किए जाने की आवश्यकता है। देश के भविष्य को उज्जवल बनाने के लिए सभी को नागरिकता के कर्त्तव्यों का पालन करना चाहिए। देश पिछड़ा, गरीब या विकासशील है तो सब कुछ नागरिकों पर निर्भर करता है तब तो और भी विशेष रूप से जब वह देश एक प्रजातांत्रिक देश हो। प्रत्येक को देश के अच्छे नागरिक होने के साथ वफादार भी होना चाहिए। लोगों को सभी नियमों, अधिनियमों और सरकार द्वारा सुरक्षा और बेहतर जीवन के लिए बनाए गए कानूनों का पालन करना चाहिए।

उन्हें समानता और समाज के उचित समीकरण में विश्वास करना चाहिए। किसी को भी अपराध के प्रति सहानुभूति ही नहीं दिखानी चाहिए, उसके खिलाफ आवाज उठानी चाहिए। उन्हें अपने देश की ऐतिहासिक विरासत और पर्यटन स्थलों को नष्ट नहीं करने देना चाहिए। हर नागरिक का कर्त्तव्य है कि वह देश में हो रही हर गतिविधि की पूरी जानकारी रखें।

भारत वह देश है जो विविधता में एकता के सिद्धांत में विश्वास रखता है। जहाँ एक से अधिक धर्म, जाति, पंथ, सम्प्रदाय और भाषाओं के लोग एक साथ रहते हैं ये वह देश है जो पूरी दुनिया में अपनी संस्कृति, परम्परा और ऐतिहासिक धरोहरों के कारण प्रसिद्ध है। हालांकि ये यहाँ के नागरिकों की गैर जिम्मेदारियों के कारण अभी भी विकासशील देश की श्रेणी में ही गिना जाता है।

अमीर और गरीब के मध्य बहुत अधिक अन्तर है। अमीर व्यक्ति गरीबों को न तो समझते हैं न ही उनके प्रति अपनी जिम्मेदारियों का पालन ही करते हैं। वो देश की आर्थिक वृद्धि के बारे में अपनी जिम्मेदारी को भी भूल गए हैं। सभी लोगों के पीछड़ेपन को हटाने में, भ्रष्टाचार को खत्म करने में, गंदी राजनीति को बंद करके देश की समृद्धि में मदद करनी चाहिए। एक स्वार्थ रहित और देश के प्रति अच्छे कर्त्तव्य की पहल का उदाहरण भारतीय सैनिकों द्वारा देश की सीमाओं की सुरक्षा के लिए निभाई जाने वाली ड्यूटी है। वो हमें और हमारे देश को दुश्मनों से बचाने के लिए 24 घण्टे सीमा पर खड़े रहते हैं।

भारत धार्मिक, सांस्कृतिक और परम्पराओं वाला देश है, यह विविधता में एकता के लिए प्रसिद्ध है। हालांकि, विकास के लिए अस्वच्छता, भ्रष्टाचार, सामाजिक संघर्षों, महिलाओं के खिलाफ अपराधों, गरीबी, प्रदूषण, ग्लोबल वार्मिंग आदि की समाप्ति के लिए अपने नागरिकों को और अधिक प्रयासों की आवश्यकता है। सभी को दूसरों को दोषी ठहराने के बजाय देश के प्रति अपने कर्त्तव्यों को समझना होगा। देश के विकास और उन्नति के लिए सभी लोगों को अपनी अपनी जिम्मेदारी समझनी होगी। लाओत्से तुंग के प्रसिद्ध कथन ''हजारों मीलों की यात्रा एक कदम से शुरू होती है।'' इसके भाव को समझना होगा। सभी को अपने मौलिक कर्त्तव्यों के बारे में जानकारी होनी चाहिए और उन्हें नजर अंदाज किए बिना अनुकरण भी करना चाहिए। देश के एक जिम्मेदार नागरिक होने के कारण सभी को अपने कर्त्तव्यों का पालन ईमानदारी से करना चाहिए।

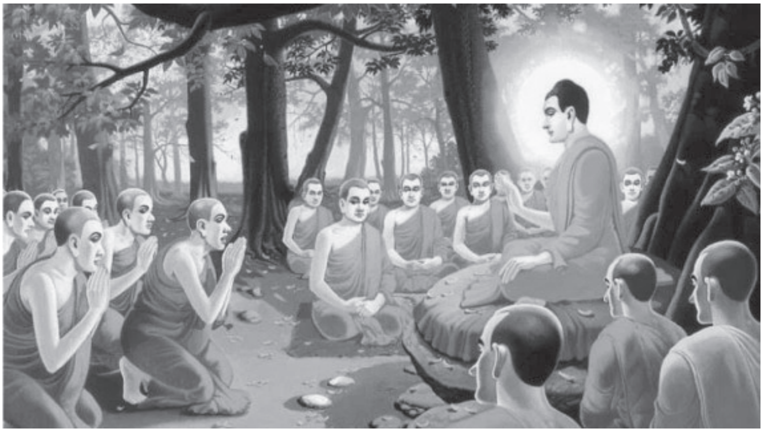

मनुष्य जीवन की स्थिति एवं प्रगति का अस्तित्व एवं आधार शिला है, उसकी कर्त्तव्यपरायणता। यदि हम अपनी जिम्मेदारियों को छोड़ दें और निर्धारित कर्त्तव्यों की उपेक्षा करें तो फिर ऐसा गतिरोध उत्पन्न हो जाएगा कि प्रगति और उपलब्धियों की बात तो दूर मनुष्य की तरह जीवनयापन कर सकना भी असम्भव हो जाएगा। जीवन की हर उपलब्धि कर्त्तव्यपरायणता पर निर्भर है। सरहद की सुरक्षा एवं स्थिरता कर्त्तव्यनिष्ठा पर ही निर्भर है। हमें बहुमूल्य मनुष्य शरीर मिला है। उसे नीरोग, परिपुष्ट एवं दीर्घजीवी तभी बनाया जा सकता है जब शौच, स्नान, स्वच्छता, कठोर श्रम, संयम, इन्द्रिय निग्रह, विश्वास आदि की जिम्मेदारियों को ठीक तरह निर्वाह किया जाए। मन की प्रखरता एवं समर्थता इस बात पर निर्भर है कि चिन्ता, शोक, निराशा, भय, क्रोध एवं आवेश आदि से उसे बचाएँ और उत्साह, विश्वास, संतुलन, स्थिरता, एकाग्रता जैसे सद्गुणों से सुसज्जित कराया जाए। यदि मन को ऐसे ही निरंकुश छोड़ दिया जाए तो वह आप ही अपने लिए सबसे बड़ा शत्रु सिद्ध होगा। मन को साधने और सुसंस्कृत बनाने की जिम्मेदारी उस प्रत्येक व्यक्ति की है, जिसे मानसिक क्षमता का वरदान मिला है। शरीर केवल भोग के लिए नहीं मिला है। उसके विकास, सुविधा, संतोष एवं स्वास्थ्य की हर आवश्यकता को पूरा करना भी कर्त्तव्य है।

उपार्जन, पुरुषार्थ और प्रतिभा पर निर्भर है। इन गुणों को बढ़ाते रहने की जिम्मेदारी जिसने समझी और उसके लिए सतत् प्रयत्न किया, वह सम्पन्नता का अधिकारी बना। धन आकाश से नहीं बरसता और न ही जमीन से निकलता है। चोरी- चकारी से जो धन आता है, वह उसी तरह चला भी जाता है। उससे न किसी को शांति मिलती है न ही आनन्द आता है। सम्पदा और समृद्धि के उपार्जन एवं उपयोग के साथ उनके उत्तरदायित्व जुड़े हुए हैं, जो उन्हें निभाना जानता है, उसी को सार्थक लाभ भी मिलता है। देश के सभी नागरिकों से लिए आवश्यक है कि वह वास्तविक अर्थों में आत्मनिर्भर होने के लिए अपने देश के लिए अपने कर्त्तव्यों का व्यक्तिगत रूप से पालन करें। यह देश के विकास के लिए अति आवश्यक है। जो तभी सम्भव हो सकता है जब देश में अनुशासित, समयबद्ध, कर्त्तव्यपरायण और ईमानदार नागरिक हो। ❑

(स्वतन्त्र लेखक)

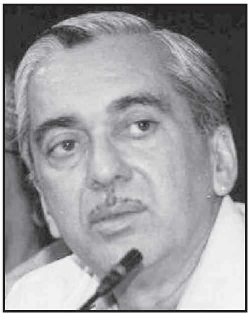

कर्तव्य निर्वाह में कोताही

❑ जगमोहन सिंह राजपूत

अभिभावकों और बच्चों के बीच प्यार का अटूट और शाश्वत संबंध मानव सभ्यता के विकास की धुरी बना रहा है। प्रत्येक माँ-बाप की सबसे सहज और संतोष देने वाली अभिलाषा यही होती है कि उनके बच्चे उनसे और अधिक अच्छा, शांतिमय एवं सुखद जीवन बिताएँ। वे इसके लिए हरसंभव प्रयास करते हैं। 21वीं शताब्दी में अपने बच्चों को अच्छी शिक्षा देने का प्रयास अब लगभग सर्वव्यापी है। माता-पिता अपने पास उपलब्ध संसाधनों से भी अधिक व्यय करने को तैयार रहते हैं। इस सबके पीछे एक नैसर्गिक प्रेम-भाव ही प्रेरणा का स्रोत होता है।

राष्ट्र के स्तर पर व्यवस्था की सबसे बड़ी जिम्मेदारी यही होती है कि भविष्य के नागरिकों को-जो देश की बागडोर कुछ वर्ष बाद संभालेंगे-अपने व्यक्तित्व विकास के पूर्ण अवसर उपलब्ध हों। भारत आज ऐसा नहीं कह पाएगा, क्योंकि उसके लगभग आधे बच्चे कुपोषित हैं, आधे से अधिक स्कूलों के पास संसाधनों की इतनी कमी है कि वे अच्छी गुणवत्ता वाली शिक्षा दे पाने की स्थिति में कभी आ ही नहीं पाते। आधिकारिक तौर पर करीब एक करोड़ बच्चे स्कूलों में नामांकित ही नहीं हैं। दस लाख स्कूलों में शिक्षकों की कमी है। कई लाख थोड़े से मानदेय पर काम कर रहे हैं। वे सदा एक असुरक्षा के वातावरण में काम करते हैं जिसमें निराशा हावी रहती है और उनका अपना व्यक्तित्व सिमट जाता है। उनसे बच्चों के व्यक्तित्व विकास की अपेक्षा करना हास्यास्पद है।

निजी स्कूलों की बात अलग है, लेकिन यह तथ्य है कि सरकारी स्कूलों में बिना प्रयोगशालाओं के ही बच्चे प्रायोगिक परीक्षाएँ उत्तीर्ण कर लेते हैं। नकल कर परीक्षा पास करना समाज में हेय दृष्टि से नहीं देखा जाता। अनगिनत स्थानों पर सारा गाँव या समुदाय इसमें भाग लेता है। अनेक उदाहरण हैं जहाँ राज्य सरकार का परीक्षा बोर्ड शीर्ष स्तर पर नकल माफिया के साथ बेहिचक

राष्ट्र के स्तर पर व्यवस्था की सबसे बड़ी जिम्मेदारी यही होती है कि भविष्य के नागरिकों को-जो देश की बागडोर कुछ वर्ष बाद संभालेंगे-अपने व्यक्तित्व विकास के पूर्ण अवसर उपलब्ध हों। भारत आज ऐसा नहीं कह पाएगा, क्योंकि उसके लगभग आधे बच्चे कुपोषित हैं, आधे से अधिक स्कूलों के पास संसाधनों की इतनी कमी है कि वे अच्छी गुणवत्ता वाली शिक्षा दे पाने की स्थिति में कभी आ ही नहीं पाते। आधिकारिक तौर पर करीब एक करोड़ बच्चे स्कूलों में नामांकित ही नहीं हैं। दस लाख स्कूलों में शिक्षकों की कमी है। कई लाख थोड़े से मानदेय पर काम कर रहे हैं। वे सदा एक असुरक्षा के वातावरण में काम करते हैं जिसमें निराशा हावी रहती है और उनका अपना व्यक्तित्व सिमट जाता है। उनसे बच्चों के व्यक्तित्व विकास की अपेक्षा करना हास्यास्पद है।

संलग्न पाया गया है। जो शिक्षा व्यवस्था और सरकारें यह सब होने देती हैं वे बच्चों के साथ घोर अन्याय कर रही हैं। क्या वे माता-पिता जो इस सबमें भागीदार हैं, अपने बच्चों से वास्तविकता में प्रेम करते हैं?

दुर्भाग्य यह है कि इस सब का 'सामान्यीकरण' हो गया है। शिक्षा परिसंवादों में 'यह तो ऐसा ही चलेगा' कहकर चर्चा समाप्त कर दी जाती है। बच्चों की सबसे पहली आवश्यकता है कि उन्हें माता-पिता का प्यार, समय और साथ मिले। अब यह पक्ष लगातार कमजोर होता जा रहा है। अपना गाँव घर छोड़ कर आए दैनिक मजदूरी पर काम करने वालों से लेकर मल्टीनेशनल कंपनियों में कार्य करने वालों तक में से किसी के पास समय नहीं है। मजदूर का बच्चा यदि सरकारी स्कूल जाता है तो वहाँ उसे करने को कुछ होता ही नहीं है। पीने के पानी से लेकर इस्तेमाल होने योग्य शौचालय तक की कमी या मास्टर साहब की अन्य व्यस्तताएँ। न खेल का सामान न अन्य कोई सुविधा।

बड़ी फीस देकर नामी-गिरामी स्कूल में बच्चों को पढ़ाने वाले माता-पिता के बच्चे सुबह पाँच बजे उठते हैं, छह बजे बस में बैठते हैं, सात बजे स्कूल प्रारंभ। लौटकर होम वर्क, ट्यूशन, प्रोजेक्ट, स्विमिंग, टेनिस, डांस और न जाने क्या क्या? थके-हारे माता-पिता जब 14-15 घंटे काम कर लौटते हैं तब बच्चों के साथ समय बिताने की कोई संभावना बचती ही नहीं है। छुट्टी के दिन या तो बच्चे के प्रोजेक्ट वर्क में व्यस्त होना पड़ता है या अगले दिन 'सतत और समग्र मूल्यांकन' (सीसीइ) के होने वाले टेस्ट की तैयारी। इस प्रकार अधिकांश बच्चों को संवेदनात्मक स्तर पर वह माहौल ही मिल ही नहीं पाता जिसमें उन्हें परिवार का वह प्यार-दुलार मिल सके जिसके वे नैसर्गिक रूप से हकदार हैं। साधन-संपन्न माता-पिता इसकी भरपाई मँहगे उपहारों तथा बड़े खर्च वाले जन्मदिन आयोजन करके करते हैं।

आइंस्टीन ने बच्चों के संबंध में अनेक सार्थक विचार व्यक्त किए थे जो शाश्वत महत्त्व रखते हैं। उन्होंने माता-पिता को इंगित करते हुए कहा था कि आपके बच्चों को आपके समय और साथ की जितनी आवश्कता है उतनी उपहारों की नहीं है। आइंस्टीन ने यह भी कहा था कि यदि उनका बस चले तो वे बच्चों को केवल गणित और संगीत पढ़ाएँगे। बाकी सब जानकारी, ज्ञान और कौशल इसी से निकलेगा। बच्चों को बुद्धिमान, समझदार और मेधावी बनाना चाहते हैं तो उसे परियों की कहानियाँ सुनाइए। आज इसका अर्थ हम भूल गए हैं। दादी-नानी तो मिलती नहीं हैं अब और इसीलिए डोरेमान, हैरी पॉटर इत्यादि का सहारा लेना पड़ता है। अनेक देश बाल-साहित्य के लगातार निर्माण और वितरण की व्यवस्था करते हैं, क्योंकि नई पीढ़ी को देश, उसकी संस्कृति, इतिहास और

गौरव से जो परिचय प्रारंभिक वर्षों में मिल जाता है वह उनकी जिज्ञासा को बढ़ाता है और अधिक जानने की इच्छा को जाग्रत किए रहता है। जब बच्चे स्कूली शिक्षा पूरी करने की स्थिति में आते हैं तब तक उन्हें आगे के जीवन की जटिलताओं का आभास पूरी तरह हो जाता है। वे जानते हैं कि कठिन प्रतिस्पर्धा का सामना उन्हें करना है और अनेक बार ऐसी स्थितियाँ उनके सामने आएँगी जब न्याय नहीं मिलेगा। असली व्यक्तित्व परीक्षण का समय तो वही होगा।

आज कोटा कोचिंग के लिए देश में जाना माना नाम है। कोई सर्वेक्षण तो उपलब्ध नहीं है, पर यहाँ भेजे जाने वाले बच्चों में कितने स्वेच्छा से गए होंगे, यह प्रश्न बहुत महत्त्वपूर्ण है। उन बच्चों की स्थिति की कल्पना कीजिए जो नहीं जाना चाहते थे, लेकिन परिवार के दबाव में उन्हें वहाँ जाना पड़ा। इस आयु-वर्ग में यदि एक भी तरुण आत्महत्या करता है तो सारे देश को उसका संज्ञान लेना चाहिए और उन स्थितियों में सुधार करना चाहिए जो जानलेवा साबित हुई हैं। कोटा में कितनी ही आत्महत्याएँ हो चुकी हैं मगर वहाँ धरातल पर कुछ भी परिवर्तित नहीं हुआ है। यह समाज और राष्ट्र का कैसा कर्तव्य निर्वाह है? हम चाहें तो जापान और जर्मनी से बहुत कुछ सीख सकते हैं। द्वितीय विश्वयुद्ध में सबसे अपमानित और ध्वस्त देश थे ये दोनों। इन्होंने अपने बच्चों को वह सब कुछ दिया जो उनका जन्मसिद्ध अधिकार था। उन्हें अपनी मातृभाषा में शिक्षा दी, राष्ट्रीयता और संस्कृति से ओतप्रोत पाठ्यक्रम निर्मित किए, सही पारिवारिक और संस्थागत वातावरण में बढ़ने के अवसर दिए गए और प्रतिभा विकास में विशेष प्रयत्न करने में राष्ट्र और समाज पीछे नहीं रहा। इनसे बहुत कुछ सीखा जा सकता है और बच्चों को उनके अधिकार दिए जा सकते हैं। ❑

(लेखक एनसीईआरटी के पूर्व निदेशक हैं)

Duties and Rights

❑ Prof. TS Girishkumar

Most discussions on this topic speak about 'Rights and Duties', but let us do the reverse, why can't we talk about 'Duties and Rights'? Why rights should come first and duties second? Does this not imply some kind of anthropocentrism in English language? Indeed, anthropocentrism is the case with European theology, it all begins with instructions from religions that 'God created everything, finally created man in God's own image, gave him the most central position among all creations, instructed him that everything is for man, and he is the master over everything'. It is from these very theologies that the egocentric perceptions of man begins, and had gone a long way into the destruction of nature, other living and non-living beings and the entire eco system itself. Ironically, when things started really going above their noses, they started coming out with theories of protecting environment, and further ironically, stated teaching others about environment, environmental ethics and so on. Indeed, this is an amazing world we have!

The whole thing is so different in Bharat. The Karma theory taught to us through Gita lives with us, making continuous impacts in our living day in and day out, explicitly or implicitly. We live karma, we live Kartavya, and we live Duty in all its forms. Dharma enables us to perform them; Dharma enables us to go forward with them, in complete ease and without an iota of strain. We may not be conscious of these things at all, but we keep performing them. That is Bharatiya Parampara, Sanskriti, and Dharma.

The impacts of giving primacy to rights above duties

In practice, giving priority to rights above duties had played havoc with human civilisations. This had been brought out very well by Marx and his followers to begin with, in the 'civilised' world. Whatever might be stated in the books of Marx, the Marxists interpreted the theory as a theoretical system protecting and upholding the rights of people. Their spokespersons all over the world had been teaching people of people's various rights from varying directions, and instructing them to revolt to assert their rights. The indelible impressions from such theories are constantly and consistently present in the making of various other 'rights' activisms, like human rights activism, feminist rights activism, Dalit rights activism in Bharat and for that matter any sectarian rights activism anywhere. The virus of negativism got amalgamated with the concept of rights and had remained ever powerful.

A quick run through European theories shall at once reveal these 'contradictions'. In modern times, there were aspirations for 'highest individual freedom' leading to laisses fare states.Theorists were ambitious that

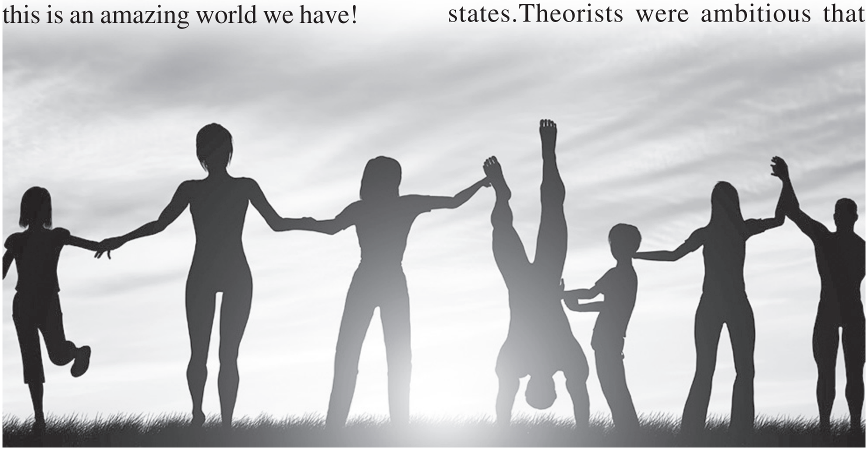

they could guarantee the highest freedom to their citizens and let 'them alone' have without any regulations from any kind of rules. The chaos resulted from this situation compelled them to introspect, and they started making regulations and restrictions. They have theories of classical, modern and neo liberalisms, amending and making changes from time to time as and when flaws from thoughts become unbearable. It indeed is another thing that Marx was dreaming of yet another kind of total freedom to man, which he creates from another very romantic dream. He would say that there is an 'inner law of reason' to all humans as common phenomenon, and when the objective law, which is the law of the rule, do not contradict with the inner law of reason, there shall be no need for a state, law, boundaries of nation and so on. In other words, he speculates of a situation where the objective law and the inner law of reasons are just one and the same thing. Hence there shall be no contradictions between the inner law of reason, and from these he envisages a situation of anarchy, where man is so completely free and uncontrolled because there shall be no need to control man any more. Thus, from classlessness he transcends to statelessness. (1844 manuscripts for quick reference)

For all practical help, let us just look at the communist activities, particularly in Bharat. This is so conspicuous in places like Kerala where communists are with political power. The leaders inspire people of their rights, and push them forward to agitations, perfectly in order with what their theories teach them. Subsequently, agitations become a way of life, and methodology to anything. It may be interesting to note that even when they are in the rule, they keep going on with ruling on the one hand and agitating on the other! Obviously in such situations, peace gets far flung. Should we ask a question: what kind of society shall be a desideratum with all these, they would argue that turmoil and struggles are categorical indication of progression and development; but what shall our common sense suggest? For whatever reasons, to destroy tranquillity, can that make sense? Let us ponder.

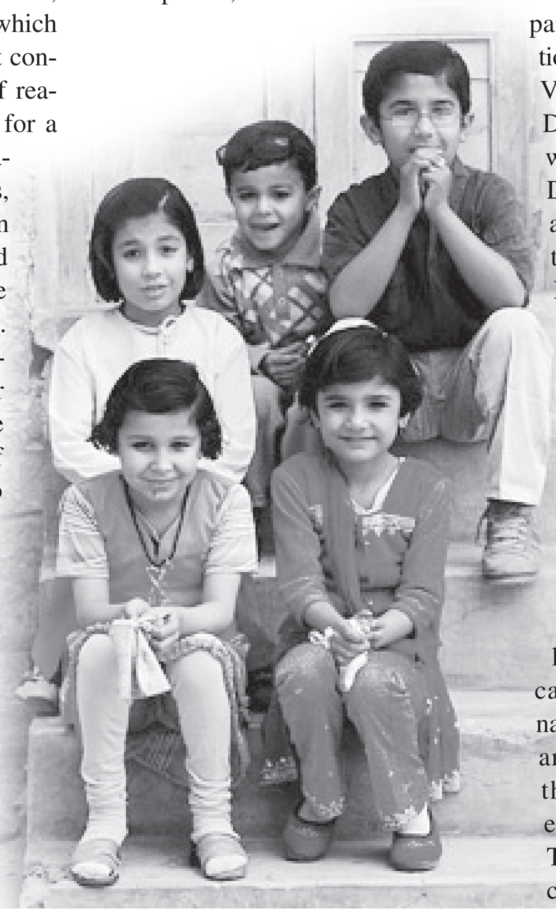

Rights in Bharat

Adhikar is the common word we use in Bharat to denote rights. How often and where do we see this concept is being used? There are occasions when we say, your blessings are my right, it is my right to respect you etc. any other conception of rights are either implicitly or explicitly a product of this logic: and in other explicit expression, the whole thing belongs to nothing other than Dharma.

There is no escape for any Bharatiya from the Vedopanishadic knowledge tradition and Dharma. Dharma, the Vedic Dharma has numerous Dharmas as ingredients within, as specific, particular Dharmas. Our very personality is an essential constitution of structured Dharmas of varying kinds. The fearless Bharatiya demands for his Dharmic rights and normally it simply gets approved and done.

Thus, the very nature of rights taught to us is entirely different from the nature of rights discussed in European knowledge tradition. One can say safely, though the name is the same; they both are actually two different things. Hence let us not equate one with the other. The same also goes to concepts of duties.

Duties as understood in European knowledge tradition

It is serious thing to think about the kinds of duties contemplated in the European knowledge tradition. Apart from the Semitic religious background, where duties are prescribed to religion and God, what are the prescribed duties to society, family and nature?

There are no duties prescribed to the nature, the environment in any specific terms. Their theology teaches them that God created everything taking six days, where he took the 'Sabbat' (rest) on the seventh day. God created man at last, in his own image and made a paradise for him to live comfortably. Further, the instruction God gave him was this, 'everything I created is for you, and you shall be the master, and use them to your requirement'

With such an instruction, man started 'using' nature, and such 'using' became abusing environment. The results of this environmental abuse are well evident now, and the very Europeans who created all these started instructing all others to save environment now. Thus, their duties to nature had been ill defined all these days. There are also no strict codes of conduct concerning duties to both family and society. Their speculative philosophy for society is social contract theories; that society got formulated by man entering into contract with one another for mutual benefit.

Param Pujniya Guruji makes an excellent remark on the social contract theories in his 'bunch of thoughts'. Pujniya Guruji remarks that Bharatiya understanding of society is not social contract, we understand society as a formation based on the concept of Tyaga.

As for duties to family, it becomes rather enigmatic to discuss such things in European context. With philosophies of the highest or otherwise, total or near total individual freedoms in question, self-centred human existence and non-interference becomes the norm of normal living. Obviously, this shall not make families as one understands families in Bharat.

Duties, 'Kartavya' in Bharatiya knowledge tradition

For a Hindu, who is the inheritor of the Vedopanishadic knowledge tradition, the concept of Kartavya is a very serious one. As there are many Dharmas of specific nature within the huge umbrella of Dharma as such, there are various Kartavya presented to us through Dharma. Should we seriously contemplate on this, we will know that our entire lives are filled with Kartavya of varying kinds. Dharma would demand that one should be conscious of duties

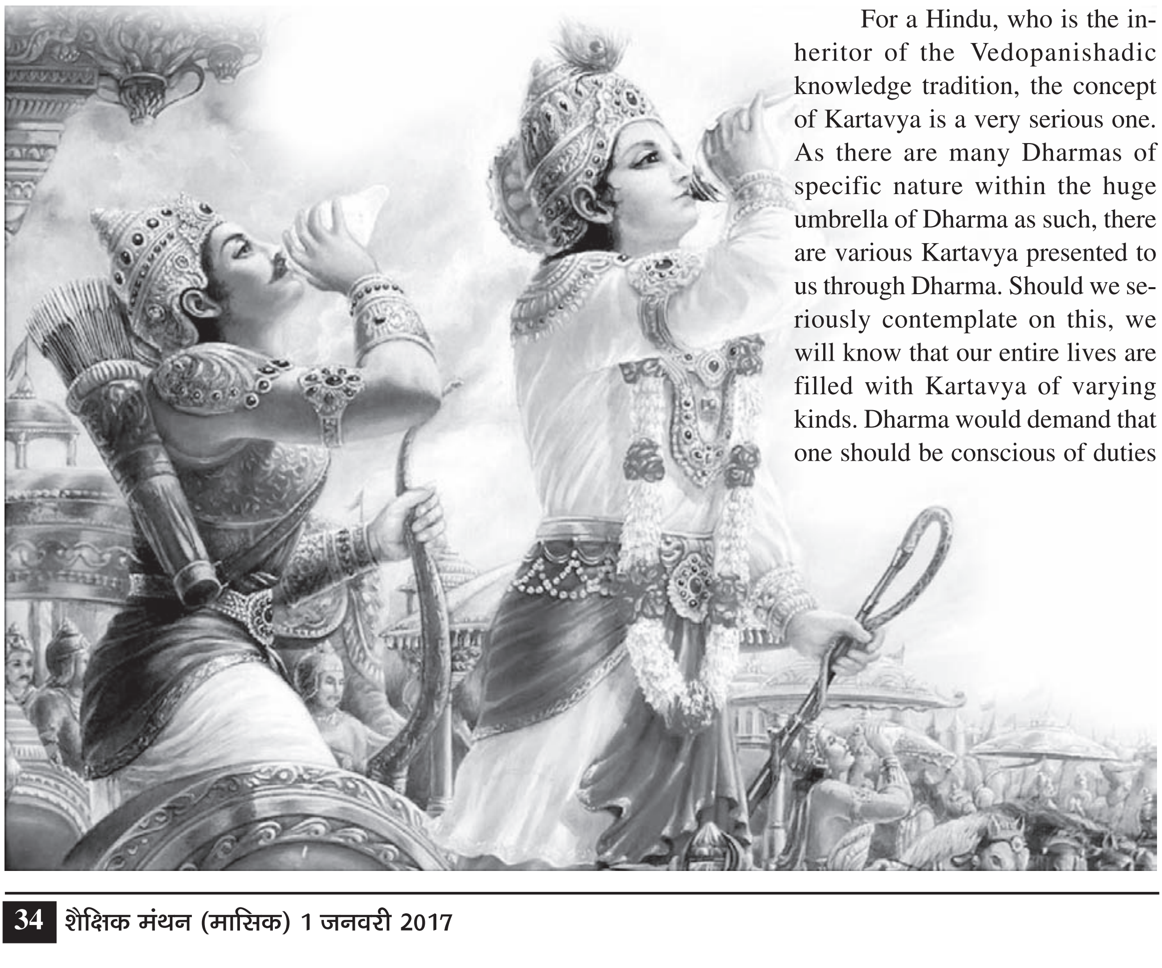

to one's own self to begin with, through a consciousness of what one is. Then we have Kartavya to families, duties to each member of the family. Then comes our duties to society as such. From self-respect, from belonging to family, from belonging to society, arises a very strong sense of belonging to the Nation, together to create a 'Nation Soul'. Once we are a Nation Soul it shall be easy for the Hindu to look at the whole cosmos as one family, to make it Vasudhaiva Kutumbakam or to aspire for Loka Samasta Sukhino Bhavantu.

Thus, the whole process arises from pure soul, cleansed soul through what may be called 'Chitta Suddhi' itself; and then proceeding slowly and subsequently to higher levels. This could be seen as 'Aham Brahmosmi' in a mundane sense of the concept, of beginning from the self; cleansing the self and subsequently elevating the self to higher and higher levels.

On another plane, one can see that Kartavya is Dharma itself. It indeed is very difficult if not impossible to make a distinction between Kartavya and Dharma. In the Vedopanishadic knowledge tradition, Kartavya and Dharma are used interchangeably and we really donot know where one ends and the other begins. For all practical purpose, Kartavya is Dharma itself.

While in mundane existence, while living as body and soul, one is to perform continuous and series of Dharmas and also ad-infinitum. Perhaps this is what precisely makes human existence worthy of it, lest, the whole thing should get empty at one single stroke.

Kartavya also assumes the role of Karma. The luminous advice from Bhagavad Gita makes it all so explicit, that there is hardly anything to discuss about the significance or the importance. Gita explains what Karma is, what could be termed Karma and how Karma must be carried out and all.

Interestingly, the German philosopher Immanuel Kant comes very close to the idea provided about karma in Bhagavad Gita. Like all other European philosophers, Kant was trying to speculate on some moral principle, which could make moral judgement possible. To make moral judgement, some principle, some criterion or such should be present as acceptable by everyone, trans-time and space. Kant is found trying out different permutations and combinations of moral principles, and they were all failing in his test of making them universal and necessary. Any moral principle must be universally acceptable and it must be necessarily followed, or it becomes impossible for one to say that either following of it is appreciated or violation of it is condemned.

After much speculation, Kant comes up with the moral dictum, 'duty of the sake of duty' just duty. And duty is for duty only, and for nothing else. It shall not be for prudence, it shall not be under obligation etc. Further, Kant tries to universalise it, tries to see whether or not it can be made applicable to everyone and every time, and finds it not becoming contradictory. After satisfying himself about the universalisability of his dictum, he makes it categorical, and imperative for everyone and makes it his moral principle. This is the 'Categorical Imperative' theory' in Moral Philosophy of Immanuel Kant, and many people had tried to draw parallels between this and the concept of Nishkama Karma in Bhagavad Gita.

That is just academics, and how academics function all over the world. Kant's moral philosophy had not made any impact on moral existence of European societies, it had become as though nothing had happened. Apart from class room discussions it made no other significance. The beautiful speculation of Kant, 'Starry sky above and Moral law within….' turns out to be nothing significant to any society.

The whole thing is so different in Bharat. The Karma theory taught to us through Gita lives with us, making continuous impacts in our living day in and day out, explicitly or implicitly. We live karma, we live Kartavya, and we live Duty in all its forms. Dharma enables us to perform them; Dharma enables us to go forward with them, in complete ease and without an iota of strain. We may not be conscious of these things at all, but we keep performing them. That is Bharatiya Parampara, Sanskriti, and Dharma. (And this is why we see long queue in banks following de-monetisation, and yet, people in general supporting it, whole heartedly, and putting up with inconvenience of any kind) ❑

(Professor of Philosophy, The Maharaja Sayajirao University of Baroda)

Kartavyabodh and Demonetization

❑ **Prof. A. K. Gupta**

After witnessing slavery for about one thousand years the mindset of a common Indian has changed so much so that a state is arrived at where black money has become a menace and simply by putting two denominations off the current practice the Government has dealt the problem. This has triggered a national debate, persons in favour and against, are speaking as per their wish and knowledge level.

In fact this is being discussed at top level recalls discussion about the issue of GDP and GHI which is prevalent in Bhutan. The issue has been addressed by Ms Indumati Katdhare stressing more about different approach of our country and western culture in a good number of speeches delivered by her. In our system of family basic root lies with the house owner lady, who is knwon to be kind hearted and willing to sacrifice for benefit of everyone in the family. Of course she was caught in a light mood, for her savings, if she had it in the notes which were banned for onward use. The duties are seldom welcome but everyone talks about the rights.

If a common person is well aware about his duties then he can work in a better way for the bright future of the country. This time too Notebandi, as is frequently used term for demonetization, has brought the persons or groups who are in favour or against it, without even worrying small trouble in the larger benefits. The target group is different than it has been faced by many others. The target group as we know is hidden who is working against the interest of our country. Those who are not working in the interest of the Nation may like to use every opportunity to save the taxes which otherwise are due and can be used for betterment of the society and nation. They just forget their duties for the nation building where the money saved by them otherwise can be used for the larger interest, safety & development of the Nation.

A majority of people have generated the habit of befooling themselves by any means suitable to them for this. If the practice is for the smaller amount it may not hamper much but intentionally doing so at larger target and thus doing it at larger level then this becomes a problem for the development

If a common person is well aware about his duties then he can work in a better way for the bright future of the country. This time too Notebandi, as is frequently used term for demonetization, has brought the persons or groups who are in favour or against it, without even worrying small trouble in the larger benefits. The target group is different than it has been faced by many others. The target group as we know is hidden who is working against the interest of our country. Those who are not working in the interest of the Nation may like to use every opportunity to save the taxes which otherwise are due and can be used for betterment of the society and nation.

of the nation. This type of persons cannot do better for their family leave aside their own health. The attempts of our Prime Minister are well supported by majority of people, who are ready to sacrifice their comforts in the larger national interest. Only a few may be criticising it with their own interest may it be for personal or political or otherwise reasons. There are groups who are in the pursuit of making this noble cause a failure. The attempt can be termed as similar to that termed as Samudra Manthan. Attempt of everyone can be analysed whether in favour or against it.

Of course social media ,at times, has tried to create a state of confusion.

In the present situation need of the hour is to support this noble cause and see that everyone working on lines of Jai Chand is exposed. The time is just right to do this duty for the benefit of nation in the larger interest. It's just right to work and have some patience. The farfetched results are obvious and can be seen in the interest of the society and the nation.

There could be a good number of arguments in favour and against it. But one would surely appreciate there could be no other way of doing it, at the same time striking the hidden agenda of those who are not rightful in their duties, thus exposing them. This is the biggest strike against corruption in addition to many other target groups may it be terrorist, political parties or even operators working at a smaller level.

In an attempt to make our country cashless is not a smaller target. People are working day and night to make it successful. The target is well supported by everyone who thinks for his/ her nation irrespective of political affiliation. Only those with their own short time agenda making hue and cry or noise. An economist can study this in depth and its long term impact. There are many aspects to it the currency in practice after notebundi, number of new notes and the gap in new notes printed by the Government. Number of notes printed by the Government and those which being deposited in the banks. Any group or institution in support of mevil group is being watched. It's a fight like situation between good and evil since 8th November this year. The evil group is trying to create pressure on the governing sector to have every opportunity to regularise their black money. Even the Government is very keen to see that final result goes in their favour. They are regularly watching the situation and taking suitable steps to have a close watch over the situation. In an attempt they have declared that certain extra tax will be charged to make their money useful.

The proposed changes in calendar financial year is also an attempt is this direction. Ultimately the whole exercise is expected to yield results in favour of common persons. If they want this exercise to be successful or not the whole responsibility lies upon them. The nature has given them a chance to be in a win-win situation. Otherwise they would simply be repenting whole life to waste this golden opportunity.

The Prime Minister is making every effort to change face of our country to be known for its self pride and bravery and intellect. It's our prime duty to support his every noble cause. "No personal consideration should stand in the way of performing a public duty". Swachhata Abhiyan or Building toilet in every house for preventing use of open space are some of the attempts one can appreciate. This economic Revolution is unprecedented and unpredictable step one would expect. Jan Dhan Yojana or making Gas available to a common man is his welfare steps for upliftment of the society. Every step taken by a common person as part of his / her duty should be appreciated. This should be appreciated for improvement of law and order situation in the country.

Gratefulness is one solution one can see and appreciate. The other thing is feeling obligatory by this whole exercise. Such a bold step is blessings in disguise for many of us. This also reflects present state of the our thoughts and current practice the country is following.

The famous lines of Swami Vivekanand can be appreciated in this scenario "Utho Jago, Lakshay Prapti Tak Ruko Mat". This is true not only for present Economic Revolution but will also result in changing the face of our country. This is also helpful in improving legal framework in the country. "Let us have faith that right makes might, and in faith, to the end, dare to do our duty as we understand it". ❑

(Professor, Structural Engineering Deptt., Faculty of Engg. and Architecture, JNV University, Jodhpur)

पंजीयन संख्या - पंजीयन संख्या -113/भील./09-10

विद्या भारती अखिल भारतीय शिक्षा संस्थान द्वारा मार्गदर्शित

भीलवाड़ा विद्या भारती शिक्षा संस्थान

(विद्या भारती चित्तौड़ प्रान्त से सम्बद्ध)

आदर्श विद्या मन्दिर उ.मा.विद्यालय परिसर 'ए' सेक्टर, शास्त्री नगर, भीलवाड़ा (राज.) 311001

☎ : 0141-252822 अणु डाक : bhlvidyabharti@gmail.com

विद्या भारती अखिल भारतीय शिक्षा संस्थान देश का एक अनूठा संस्कार आन्दोलन जो अक्षर ज्ञान को संस्कारों तथा जीवन मूल्यों से जोड़कर देव पुत्रों का निर्माण करता है।

हमारा वैशिष्ठय-

- शिक्षा का अधिष्ठान भारतीय संस्कृति एवं जीवन मूल्य।
- शिक्षा में गुणवत्ता की पराकाष्ठा।
- संस्कारक्षम वातावरण।
- श्रेष्ठ परीक्षा परिणाम, बोर्ड प्रावीण्य सूची में स्थान।
- प्रतिवर्ष बहिनों का गार्गी पुरस्कार के लिए चयन।
- सुसज्जित कम्प्यूटर लेब।
- समृद्ध पुस्तकालय।
- अरुण कक्षा (LKG) से ही अंग्रेजी एवं कम्प्यूटर का शिक्षण।
- Spoken English Classes
- प्रयोग आधारित विज्ञान शिक्षण।
- नवाचार आधारित शिक्षण।
- डिजिटल कक्षाओं का निर्माण।
- शारीरिक, योग, नैतिक एवं आध्यात्मिक शिक्षा तथा संस्कृति एवं संगीत विषयों का शिक्षण।
- आध्यात्मिक वातावरण में वंदना सत्र।
- संस्कृति ज्ञान परीक्षा राष्ट्रीय स्तर पर।
- ग्राम सम्पर्क एवं संस्कार शिविर, देश दर्शन एवं वन विहार।
- उपेक्षित जनशिक्षा निधि का संग्रह।

यदि हम चाहते हैं कि अपने नौनिहालों का जीवन आधुनिक शिक्षा के साथ-साथ संस्कार एवं सद्गुणों से युक्त हो एवं वे घर का दीपक और जग का दिवाकर बनें तो उन्हें विद्या भारती के विद्यालयों में प्रवेश दिलवायें।

नवीन सत्र हेतु प्रवेश प्रारम्भ

(डॉ. रोशन लाल पीतलिया)	(कैलाश चन्द्र शर्मा)	(अशोक कुमार व्यास)
अध्यक्ष	सचिव	मंत्री

'उच्च शिक्षा में परीक्षा सुधार' विषय पर महर्षि दयानन्द सरस्वती विश्वविद्यालय में आयोजित दो दिवसीय राष्ट्रीय संगोष्ठी को उद्घाटन सत्र में संबोधित करते हुए रा.स्व.संघ के अ.भा. सम्पर्क प्रमुख मा. अनिरुद्ध देशपाण्डे जी

'उच्च शिक्षा में परीक्षा सुधार' विषय पर महर्षि दयानन्द सरस्वती विश्वविद्यालय में आयोजित दो दिवसीय राष्ट्रीय संगोष्ठी के समापन सत्र में मंचस्थ बायें से प्रो. भगवती प्रसाद सारस्वत, प्रो. कैलाश सोडाणी, प्रो. बी.एल. चौधरी, श्री महेन्द्र कपूर एवं डॉ. सुशील बिस्सु

उच्च शिक्षा संवर्ग द्वारा केन्द्रीय मानव संसाधन विकास मंत्री श्री प्रकाश जावडेकर को ज्ञापन देते हुए पदाधिकारी

वडोदरा में आयोजित केन्द्रीय कार्यकर्ता बैठक को सम्बोधित करते हुए रा.स्व.संघ के अ.भा. सम्पर्क प्रमुख मा. अनिरुद्ध देशपाण्डे जी

दिल्ली अध्यापक परिषद की प्रांतीय वार्षिक योजना बैठक

राष्ट्रीय शैक्षिक महासंघ, हरियाणा प्रदेश टोली बैठक

ललित नारायण मिथिला विश्वविद्यालय दरभंगा (बिहार) में आयोजित
'राष्ट्रपुनर्निर्माण में उच्च शिक्षा की भूमिका' पर अन्तर्राष्ट्रीय सेमिनार में संभागी शिक्षकगण

सौखड़ा, वडोदरा में आयोजित अखिल भारतीय महिला कार्यकर्ता वर्ग को सम्बोधित करते हुए
राष्ट्र सेविका समिति की अ.भा. महाविद्यालयीन तरुणी प्रमुख माननीया भाग्यश्री साठे

राष्ट्रीय शैक्षिक महासंघ, गुजरात इकाई द्वारा अहमदाबाद में सी.आर.सी. व बी.आर.सी. के विषय पर चर्चा करते हुए कार्यकर्तागण

राष्ट्रीय शैक्षिक महासंघ, गुजरात की सुरेन्द्र नगर में आयोजित प्रदेश कार्यकारिणी बैठक को सम्बोधित करते हुए
अ.भा. संगठन मंत्री श्री महेन्द्र कपूर, श्री मोहन पुरोहित, श्री घनश्याम भाई पटेल, श्री भीखा भाई पटेल एवं श्री रत्तु भाई गोल

म.प्र. शिक्षक संघ द्वारा प्रांतीय महिला अभ्यास वर्ग डबरा (ग्वालियर) में सम्पन्न

तेलंगाना प्रांत उपाध्याय संघ की प्रदेश कार्यकारिणी बैठक को सम्बोधित करते हुए रा.स्व.संघ, तेलंगाना प्रांत प्रचारक श्री देवेन्द कुमार जी

कर्नाटक राज्य माध्यमिक शिक्षक संघ द्वारा पदोन्नति एवं नई भर्ती विषय पर शिक्षा मंत्री को ज्ञापन देते हुए संगठन के कार्यकर्तागण

देशीय अध्यापक परिषद (एनटीयू), केरल के कन्नूर में आयोजित प्रतिभा पुरस्कार कार्यक्रम का दीप प्रज्वलन करते हुए प्रदेश अध्यक्ष

देशीय अध्यापक परिषद (एनटीयू), केरल के प्रदेश अध्यक्ष श्री टी.ए. नारायण प्रतिभाओं को सम्मानित व संबोधित करते हुए एवं प्रदेश महामंत्री श्री पी.एस. गोपकुमार

हमारे प्रकाशन

1.	शिक्षा : दृष्टिकोण और दिशा	प्रो. के. नरहरि
2.	A Vision & Direction to Education	Prof. K. Narahari
3.	अखिल भारतीय राष्ट्रीय शैक्षिक महासंघ : परिचय, कार्य और व्यवहार	संकलन
4.	ABRSM : An Introduction	संकलन
5.	भारतीय इतिहास : विकृतिकरण के प्रयास	प्रो. के. नरहरि
6.	1857 का स्वातंत्र्य समर (प्रश्नोत्तर रूप में)	हनुमान सिंह राठौड़
7.	शिक्षक वैज्ञानिक : प्रफुल्ल चन्द राय	विष्णु प्रसाद चतुर्वेदी
8.	A Saint Scientist : Acharya Prafull Chand Ray	Ajit Kumar Biswas
9.	सांस्कृतिक भारत	जे.एस. राजपूत
10.	सच्चर का सच	संकलन
11.	Towards Further Balknization of India	Swapan K. S. Choudhary
12.	मातृभाषा	संकलन
13.	रवीन्द्रनाथ का शिक्षा दर्शन	विष्णु प्रसाद चतुर्वेदी
14.	शिक्षा (स्वामी विवेकानन्द की दृष्टि में)	हनुमान सिंह राठौड़
15.	आचार्य शंकर	हनुमान सिंह राठौड़
16.	नमन – भारतीय शिक्षक परम्परा	विष्णु प्रसाद चतुर्वेदी
17.	जयतु भारत	संकलन
18.	विवेक यात्रा (स्वामी विवेकानन्द के जीवन पर प्रश्नोत्तरी)	हनुमान सिंह राठौड़
19.	जम्मू-कश्मीर : तथ्य और सत्य	आशुतोष भटनागर
20.	अद्वैत की वैज्ञानिकता और स्वामी विवेकानन्द	विष्णु प्रसाद चतुर्वेदी
21.	शाश्वत जीवन मूल्य	हनुमान सिंह राठौड़
22.	बाबा साहब डॉ. भीमराव अम्बेडकर का शैक्षिक अवदान	हनुमान सिंह राठौड़

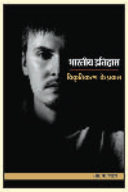

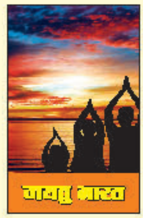

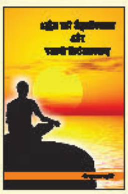
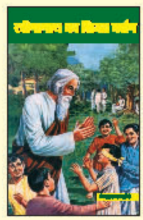

पुस्तक प्राप्ति स्थान

अखिल भारतीय राष्ट्रीय शैक्षिक महासंघ

शैक्षिक महासंघ सदन, 606/13, कृष्णा गली नं.9, मौजपुर, दिल्ली-110053 दूरभाष : 011-22914799

website: www.abrsm.in, www.abrsm.co.in

Email: abrsmdelhi@gmail.com, abrsmdelhi@rediffmail.com

गुणवत्ता का पाठ

❑ कैलाश चंद्र काण्डपाल

आज गुणवत्तापरक शिक्षा पर चर्चा आम है, इसे लेकर चिंता जताई जा रही है तो इसके हर स्तर पर सोचना जरूरी भी है। सबसे पहले तो इसी बात पर विचार किया जाना चाहिए कि गुणवत्तापरक किसे कहेंगे। मुझे लगता है कि किसी भी विचार या वस्तु के लिए हम कोई मानक निर्धारित करते हैं। अगर परिणाम वांछित हों तो हम मानते हैं कि किया गया कार्य गुणवत्तापरक था। शिक्षा के लिए भी इसी प्रकार के मानक हमने निर्धारित किए हैं। भारत के परिप्रेक्ष्य में देखें तो ये मानक संवैधानिक मूल्यों से आते हैं, जिसमें धर्मनिरपेक्षता, न्याय, समता, समानता, स्वतंत्रता और भाईचारा आदि हैं। अगर शिक्षा के नजरिए से देखें तो वही शिक्षा गुणवत्तापरक कही जा सकेगी जो इन मूल्यों को प्रतिपादित कर सके। सवाल यह है कि क्या हम इन संवैधानिक मूल्यों को आज तक स्थापित कर पाए हैं। अगर नहीं, तो गुणवत्तापरक शिक्षा पर कई सवाल हैं।

समाज बनने की एक प्रक्रिया होती है। समाज भी अपने लिए कुछ मूल्य निर्धारित करता है और उन मूल्यों का आधार समाज बनने की प्रक्रिया में आए नए सवालों और उन पर बने विचार होते हैं। भारत के संदर्भ में देखा जाए तो यहाँ भी इसी प्रक्रिया से समाज का निर्माण हुआ। इस समाज के निर्माण में कुछ ऐसे मूल्य भी स्थापित हो गए जो आज के परिप्रेक्ष्य में एक स्वस्थ सामाजिक व्यवस्था के प्रतिकूल हैं। सामंतवादी विचार, ऊँच-नीच का भेदभाव, लिंग, जाति, वर्ग और धर्म का विभेद आदि कई विचार हैं जो भारत जैसे देश के स्वस्थ विकास में बाधक हैं। शिक्षा एक ऐसा उपक्रम है जिससे इन विचारों पर प्रहार किया जा सकता है और अगर हम स्कूली शिक्षा का पाठ्यक्रम भी देखें तो उसमें निहित विचार भी यही है कि समाज में स्थापित ऐसे विचारों में बदलाव हो। फिर ऐसा क्या है कि आजादी के लगभग सात दशक बाद भी हम इस सामाजिक विचारों को वांछित रूप में नहीं बदल पाए हैं।

सामाजिक बदलाव शिक्षा से ही होगा यह तय है। फिर वे कौन-से कारण हैं जो इस बदलाव को नहीं होने दे रहे हैं। इसके लिए हमें वर्तमान शिक्षा प्रणाली को देखना होगा। क्या हमारे स्कूलों की कक्षाओं में वही हो रहा है जिस तरह के समाज की संकल्पना हमने की है। अगर कक्षा में समाज के अवांछित मूल्य ही पोषित हो रहे हैं तो फिर हम बदलाव नहीं कर रहे हैं, बल्कि एक प्रकार के समाज की प्रतिलिपि ही तैयार कर रहे हैं। बदलाव तब होगा जब हम निर्धारित संवैधानिक मूल्यों को कक्षा में देख पाएँगे। उदाहरण के तौर पर ज्ञान प्राप्त करने के लिए दंड के प्रावधान पर विचार करें। अगर हम दंड देकर कुछ सिखाना चाहते हैं तो फिर हम किस तरह का समाज बनाना चाहते हैं? सिखाने की प्रक्रिया क्या है, यही तय करेगी कि बच्चा समाज के किन मूल्यों को लेकर जाएगा। दंड देकर सिखाने से बच्चे में कौन से मूल्य

सामाजिक बदलाव शिक्षा से ही होगा यह तय है। फिर वे कौन-से कारण हैं जो इस बदलाव को नहीं होने दे रहे हैं। इसके लिए हमें वर्तमान शिक्षा प्रणाली को देखना होगा। क्या हमारे स्कूलों की कक्षाओं में वही हो रहा है जिस तरह के समाज की संकल्पना हमने की है। अगर कक्षा में समाज के अवांछित मूल्य ही पोषित हो रहे हैं तो फिर हम बदलाव नहीं कर रहे हैं, बल्कि एक प्रकार के समाज की प्रतिलिपि ही तैयार कर रहे हैं। बदलाव तब होगा जब हम निर्धारित संवैधानिक मूल्यों को कक्षा में देख पाएँगे। स्थापित अवांछित सामाजिक मूल्य और शिक्षा से उन मूल्यों को चुनौती देना एक सतत् प्रक्रिया है, लेकिन यह इस बात पर निर्भर करता है कि इस शिक्षा के वाहक क्या अपने अंतर्मन से स्थापित सामाजिक मूल्यों से मुक्त हैं और शिक्षा से दिए जा रहे मूल्यों के लिए उनकी मान्यता प्रबल है।

पल्लवित होंगे, इस पर विचार करना होगा। इसी प्रकार स्कूली शिक्षा के लिए कुछ विचार, जैसे कि पास-फेल, प्रतिस्पर्धा और अन्य ऐसी मान्यताओं पर विचार करना होगा।

समाज के नागरिक कैसे होंगे, यह इस बात पर निर्भर करता है कि हमारे स्कूल और वहाँ पर पाठ्यचर्या कैसी है। किसी पुस्तक के पाठ की उपयोगिता इस बात पर निर्भर नहीं करती कि उसकी सामग्री कैसी है, बल्कि इस बात पर कि उसका संपादन कैसा हो रहा है। इसलिए बात यह ज्यादा महत्त्वपूर्ण है कि पाठ्यवस्तु के इतर स्कूल की प्रक्रिया या पाठ का संपादन कैसा है। पाठों में लैंगिक असमानता पर प्रहार करने से यह तय नहीं हो जाएगा कि उससे बच्चे लैंगिक असमानता के विरोध में विचार बना पाएँगे, बल्कि क्या इस कक्षा की प्रक्रियाओं में लैंगिक असमानता का विरोध स्पष्ट है। इसलिए जरूरत इस बात की है कि पाठ्यवस्तु कक्षा के जीवन में उतरे, न कि मात्र पाठ वाचन के रूप में हो। तभी हम वांछित सामाजिक परिवर्तनों की ओर बढ़ पाएँगे और अपने संवैधानिक मूल्यों को स्थापित कर पाएँगे।

स्थापित अवांछित सामाजिक मूल्य और शिक्षा से उन मूल्यों को चुनौती देना एक सतत् प्रक्रिया है, लेकिन यह इस बात पर निर्भर करता है कि इस शिक्षा के वाहक क्या अपने अंतर्मन से स्थापित सामाजिक मूल्यों से मुक्त हैं और शिक्षा से दिए जा रहे मूल्यों के लिए उनकी मान्यता प्रबल है। अगर उनके मन में ही इसको लेकर संघर्ष है या शिक्षा के मूल्यों में कोई आस्था नहीं है तो इस बात की कोई संभावना नहीं है कि वे समाज के लिए वांछित आदर्श मूल्यों को कक्षा में स्थापित कर एक ऐसे समाज का निर्माण कर पाएँगे। इस बात के लिए यह जरूरी हो जाता है कि शिक्षा के वाहक ऐसे हों जो दी जा रही शिक्षा के संदर्भ को भली-भांति समझें। उन मूल्यों को स्थापित करने के प्रति कटिबद्ध हों, जिन उद्देश्यों के लिए शिक्षा का उपक्रम रचा गया है? तभी गुणवत्तापरक शिक्षा के निर्धारित लक्ष्य प्राप्त हो सकेंगे।❑

नर पुंगव कर्त्तव्य .....

❑ भरत शर्मा 'भारत'

गर्व करो ऐ हिंदुस्तानी संतानों।
अपने पुरखों की मर्यादा को जानों।
किसने कब क्यों कैसे जीवन त्याग दिया।
उस दधीचि की त्याग भावना पहचानों।
परमारथ में स्वार्थ नहीं टकराते हैं ।
नर पुंगव कर्त्तव्य निभाते जाते हैं ।।1।।
नर पुंगव.........

सेतुबन्ध में एक गिलहरी सहयोगी।
चुटकी भर मिट्टी की महत्ता क्या होगी।
लेकिन उसको अपना धर्म निभाना था।
पूजित यह निष्काम कर्म, पूजा होगी।
राम स्वयं उसका सम्मान बढ़ाते हैं।
नर पुंगव कर्त्तव्य निभाते जाते हैं ।।2।।
नर पुंगव.........

गर्वीले सैनिक सीमा पर जाते हैं।
बर्फीले दर्रों में सेज़ सजाते हैं।
निज शोणित की ऊर्जा से आप्लावित हो।
मातृभूमि हित जीते हैं मर जाते हैं।
आँचल राखी कंगन गरिमा पाते हैं।
नर पुंगव कर्त्तव्य निभाते जाते हैं ।।3।।
नर पुंगव.........

विघ्न कौनसा मन मानस झकझोर रहा।
वात्याचक्रों का अपना ही दौर रहा।
जिनकी भृकुटि में पलते हैं प्रलय-सृजन।
उनके सम्मुख काल सदा कमजोर रहा।
ध्येयनिष्ठ कंकर शंकर बन जाते हैं।
नर पुंगव कर्त्तव्य निभाते जाते हैं ।।4।।
नर पुंगव.........

आओ हम सब पुण्य पंथ को अपनायें।
वसुंधरा पर संस्कृति परचम फहरायें।
अनाचार मन की शुचिता से मिटते हैं।
संस्कार के सुमन सृष्टि पर विकसायें।
संकल्पित मन दिशा नई दे पाते हैं।
नर पुंगव कर्त्तव्य निभाते जाते हैं ।।5।।
नर पुंगव.........

(व्याख्याता, रा.उ.मा.वि.माणक चौक, जयपुर)

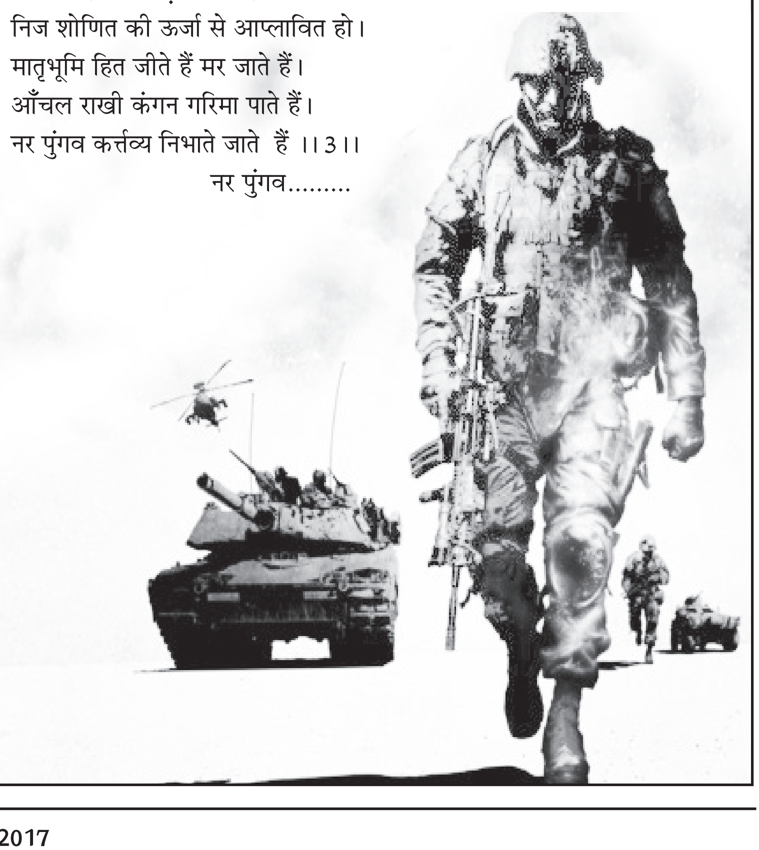

मूल्यांकन की समस्या

❑ डॉ. ललित कुमार

मूल्यांकन पद्धति में बदलाव एक अपरिपक्व निर्णय पर आधारित नहीं बल्कि शोध एवं विश्लेषण का उचित उपयोग निर्णय के केंद्र में हो। शिक्षा जगत के दार्शनिक, मनोवैज्ञानिक, समाजशास्त्री, तकनीकी एवं अन्य विचारों से अपरिचित नहीं हैं और विभिन्न आयोगों एवं समितियों की अनुशंसा से भी परिचित हैं? क्या उन्हें इसका उचित प्रशिक्षण दिया गया है? क्या सतत् एवं व्यापक मूल्यांकन कर सकने का उनके पास समय और अवसर है।

मूल्यांकन शब्द या सम्प्रत्यय का तात्पर्य बहुत सीमित दायरे में लिया जाता है। और अधिक दुख का विषय तब बन जाता है, जब शिक्षा व्यवस्था का सबसे महत्त्वपूर्ण अंग शिक्षक भी या तो इसे नहीं समझते हैं या फिर समझकर भी इसका उपयोग एवं प्रयोग इसकी महत्ता के अनुरूप नहीं करते हैं। शिक्षा व्यवस्था इस तय को स्वीकार करने के लिए तैयार नहीं है कि मूल्यांकन उतना ही महत्त्वपूर्ण है जितना शिक्षण एवं अध्यापन। यदि हम इसे व्यापक रूप में समझने का प्रयास करें तो आसानी से इन सम्प्रत्ययों के अंतर्सबंध को समझने में भूल नहीं करेंगे। शिक्षण एवं मूल्यांकन में अन्योनाश्रित संबंध है और यह तय है कि बिना प्रभावकारी मूल्यांकन के प्रभावी शिक्षण संभव नहीं है। मूल्यांकन का कार्य अंक एवं ग्रेड तक सीमित नहीं है। मूल्यांकन द्वारा प्राप्त प्रतिपुष्टि (फीडबैक) शिक्षण एवं शिक्षक की प्रभावोत्पादकता की जानकारी देता है साथ ही छात्र की उपलब्धि, रुचि तथा उसके समझने या समझने से संबंधित तय मानक का भी उद्घाटन करता है। विद्यालय शिक्षा की गुणवत्ता वृद्धि में उचित मूल्यांकन आवश्यक है और पूरा शिक्षा जगत इस तय मानक को अपने ढंग से समझने और समझाने में व्यस्त है। मूल्यांकन किसे करना है?-शिक्षकों को, भले ही उनकी भूमिका परीक्षक की भी हो। मूल्यांकन की सफलता-असफलता सीधे शिक्षक से संबंधित है और नीति निर्धारक इस तय मानक से साक्षात्कार ही नहीं करना चाहते। दसवीं की परीक्षा विद्यालय आधारित हो या बोर्ड आधारित? आठवीं तक उत्तीर्ण न करने की प्रक्रिया को बंद रखें या चालू रखें? क्या देश ने इन दोनों मूल्यांकन से संबंधित विचारों को लागू करने से पहले नहीं सोचा था या अब उस तय मानक को झुठलाने का प्रयास बिना सार्थक कारण से किया जा रहा है। जिसके फलस्वरूप ये

शिक्षकों की नियुक्ति, उनका प्रशिक्षण, उनकी सेवा-शर्तें, उनके अर्थभार, उनके व्यावसायिक विकास आदि की अनदेखी कर कोई सुधार का प्रयास शिक्षा में सार्थक प्रमाण नहीं पा सकता। शिक्षक को जिम्मेवार बनाना राजनीतिक गीतिविधियों से ज्यादा-से-ज्यादा दूर रखना, गैर शैक्षिणक कार्यों से कम-से-कम जुड़ने देना, शिक्षण से अलग कार्यों में व्यस्त न होने की प्रकृति का विकास करना आदि इस दिशा में सार्थक पहल हो सकती है। और परिणाम देने वाले शिक्षकों की विभिन्न प्रकार से पुरस्कृत किया जा सकता है। कहना न होगा कि इन क्रियाकलापों का सीधा संबंध मूल्यांकन से प्रभावोत्पादकता एवं मूल्यांकन के यथा उचित अनुप्रयोग से है।

निर्णय लिये गए? क्या नीति निर्धारकों के पास इस विपरीत प्रकृति के दो विचारों का कोई शोधपरक या विश्लेषण आधारित जवाब है?

उत्तीर्ण-अनुत्तीर्ण से क्षय एवं संस्थागत (वेस्ट एवं स्टैगनेशन) का सीधा संबंध माना गया। तात्पर्य यदि छात्र-छात्राओं को अनुत्तीर्ण किया जाता है तो वो विद्यालय छोड़ देते हैं और पढ़ाई के प्रति उनमें नकारात्मक सोच पैदा हो जाती है। एक ही वर्ग में कई वर्ष रह जाने से छात्र-छात्राओं में ऐसे भाव जन्म लेते हैं। शायद शिक्षा जगत को याद हो कि इस देश में परीक्षा देने के भय से उत्पन्न आत्महत्या की प्रवृत्ति जब बढ़ी तो इसके उपाय के रूप में मूल्यांकन के प्रकृति में बदलाव की बात सोची गई। उन दिनों में केंद्रीय विद्यालय संगठन (केवीएस) ने कई कार्यक्रम आयोजित कर अपने शिक्षकों को इस समस्या से एवं इसके उपाय से परिचित कराने का सफल प्रयास भी किया। क्या देश जानता है कि मूल्यांकन पद्धति में हुए इस बदलाव का छात्र-छात्राओं में आत्महत्या की प्रवृत्ति में कोई सकारात्मक प्रभाव पड़ा है? यदि हाँ तो क्या इस तय मानक का नीति-निर्धारण में उपयोग हुआ? मूल्यांकन परीक्षा की तरह संकुचित नहीं है, इसकी व्यापकता को व्यापक ढंग से उपयोग करने की जरूरत है। सतत् एवं व्यापक मूल्यांकन का इतना सीमित उपयोग ही सारी समस्या की जड़ है। नई शिक्षा नीति (1986) का यह विचार कि नौकरी एवं उपाधि को अलग कर दिया जाए, विद्वानों का यह भी मत है कि मूल्यांकन शिक्षक से शुरू होकर शिक्षक पर ही खत्म हो जाए या यह कि पूरा मूल्यांकन आंतरिक हो बाह्य नहीं। राजस्थान के राज्यपाल की हैसियत से भारत की पूर्व राष्ट्रपति प्रतिभा पाटिल ने भी उच्च शिक्षा में सिर्फ आंतरिक मूल्यांकन की वकालत

की थी। यह भी समझना आवश्यक है कि मूल्यांकन करने वाला मूल्यांकन की पद्धति से अधिक महत्त्वपूर्ण है। जब विद्वानों ने उच्च शिक्षा में सिर्फ आंतरिक मूल्यांकन का पक्ष लिया तो फिर इसे विद्यालय स्तर पर लागू करने या रखने में क्या परेशानी है? प्रश्न और जवाब के उपयोग से क्या अधिकतम सिखाया नहीं जा सकता? प्रश्न का जवाब प्रश्न की उपयोगिता का छोटा भाग है, बड़ा भाग जवाब के उपयोग से छूट गए या फिर कमजोर छात्र-छात्राओं को सिखाना है। क्या सतत एवं व्यापक मूल्यांकन के इस उपयोग या इसके सापेक्षिक अभिभार (वेटेज) से हम अनजान हैं? इस प्रकार से किए गए मूल्यांकन का पूरे मूल्यांकन में कितना अंश है? यह अहम प्रश्न सारी समस्याओं का समाधान स्वत: दे देते हैं। मूल्यांकन पद्धति में बदलाव एक अपरिपक्व निर्णय पर आधारित नहीं बल्कि शोध एवं विश्लेषण का उचित उपयोग निर्णय के केंद्र में हो। प्रश्न के माध्यम से उठाई गई इन समस्याओं के समाधान से शायद मूल्यांकन पद्धति में निरंतर बदलाव या फिर निरर्थक बदलाव से बचा जा सके। आठवीं कक्षा तक पास-फेल की नीति तक यूनिसेफ के भारत प्रतिनिधि ने कहा कि इन बच्चों को पास-फेल के खेल में नहीं झोंकना चाहिए। आरटीई शिक्षा के प्रावधान की चर्चा करते हुए उन्होंने स्पष्ट किया कि यह निर्णय (पास-फेल) प्रावधान की गतिविधियों पर आधारित शिक्षा से मेल नहीं खाता। उन्होंने इस विचार की वकालत की कि पास-फेल का गुणवत्ता से कोई संबंध नहीं है बल्कि नीति सही ढंग से लागू न कर पाने से है। शिक्षकों की नियुक्ति, उनका प्रशिक्षण, उनकी सेवा-शर्तें, उनके अर्थभार, उनके व्यावसायिक विकास आदि की अनदेखी कर कोई सुधार का प्रयास शिक्षा में सार्थक प्रमाण नहीं पा सकता। शिक्षक को जिम्मेवार बनाना राजनीतिक गीतिविधियों से ज्यादा-से-ज्यादा दूर रखना, गैर शैक्षिणक कार्यों से कम-से-कम जुड़ने देना, शिक्षण से अलग कार्यों में व्यस्त न होने की प्रकृति का विकास करना आदि इस दिशा में सार्थक पहल हो सकती है। और परिणाम देने वाले शिक्षकों की विभिन्न प्रकार से पुरस्कृत किया जा सकता है। कहना न होगा कि इन क्रियाकलापों का सीधा संबंध मूल्यांकन से प्रभावोत्पादकता एवं मूल्यांकन के यथा उचित अनुप्रयोग से है। ❑

(लेखक शिक्षा शास्त्री हैं)

कम नगद मौद्रिक व्यवस्था को प्रोत्साहन

❑ सन्तोष पाण्डेय

देश में 30 वर्षों तक अनेक सरकारों को परखने व दस वर्ष यूपीए प्रथम व द्वितीय सरकारों के कार्यकाल में निरन्तर बढ़ते भ्रष्टाचार व कालेधन की समानान्तर अर्थव्यवस्था से त्रस्त देश की जनता ने श्री नरेन्द्र मोदी के नेतृत्व में संयुक्त जनतांत्रिक गठबंधन (एनडीए) को ऐतिहासिक स्पष्ट बहुमत प्रदान किया। यह विशाल जनमत, सरकार को भ्रष्टाचार को समाप्त कर कालेधन वाली व्यवस्था को ध्वस्त करने के लिए मिला है। सरकार अर्थव्यवस्था को पुन: पटरी पर लाकर विकास को अग्रसर करने के कार्य को सही दिशा में लाने के बाद भ्रष्टाचार, काली मुद्रा, काली कमाई, नकली मुद्रा कारोबार, आतंकवाद, माओवादी–नक्सलवादी उग्रपंथियों व अन्य समाज विरोधी गतिविधियों के उन्मूलन की ओर ध्यान केन्द्रित किया है। आर्थिक सुधारों के बड़े कार्यक्रम तब तक सफल नहीं हो सकते हैं जब तक कि उपरोक्त गतिविधियों पर अंकुश नहीं लगाया जाय। बड़े नोटों की वापसी व कम से कम नकद के प्रयोग वाली मौद्रिक व्यवस्था की ओर बढ़ना ही लक्ष्यपूर्ति के साधन है।

देश में भ्रष्टाचार व काली कमाई, काली मुद्रा व काली सम्पत्ति का मूल उद्‌गम शत प्रतिशत नकद आधारित मौद्रिक व्यवस्था में निहित है। नकद मुद्रा का कोई रंग नहीं होता है, परन्तु इसका अबाध प्रयोग करप्रवंचन के माध्यम से काली मुद्रा के सृजन में होता है। यह नकद मुद्रा जब बिना कर चुकाये व रिकार्ड में लाये बिना सम्पत्ति, सोना–चाँदी, जवाहरात अवैधानिक व्यापार व उत्पादन में लगाई जाती है तो काले धन का सृजन होता है। इस प्रकार के धन का उपयोग पुन: ऐसे ही धन के सृजन में ही नहीं होता है, वरन् यह अनेक अनुत्पादक–उपभोगों को प्रेरित करती है। एक ओर इस प्रकार के धन व सम्पत्ति के सृजन से सरकार वैधानिक करों के रूप में प्राप्त होने वाली आय से वंचित होती है। इस आय का उपयोग सरकार जनहित व विकास के कार्यों में प्रयोग करने वंचित हो जाती है। सरकार को व्यय की पूर्ति के लिए अनेकानेक कर लगाने और करों की दरों को बढ़ाने के लिये विवश होना पड़ता है। इसका भार सीधे–सीधे ईमानदारी के साथ कर चुकाने वालों को उठाना पड़ता है। जिससे कर भार असहय हो जाता है। जैसे–जैसे कर व कर की दरें बढ़ती है काली मुद्रा काली कमाई व कालेधन का सृजन और तेजी होने लगता है। इन सभी का परिणाम विकास में कमी जन सुविधाओं यथा शिक्षा, स्वास्थ्य आदि के अभाव गरीबी व बेरोजगारी के विस्तार व आर्थिक असमानताओं में वृद्धि के रूप में प्रकट होता है। यह समानान्तर व्यवस्था शनै: शनै: इतनी शक्तिशाली हो जाती है कि कोई भी चुनी हुई सरकार इसे नियंत्रित करने की चाहे कितनी भी घोषणा क्यों न करे, कोई निर्णायक कार्यवाही नहीं कर पाती है। श्री मोदी के नेतृत्व वाली केन्द्र सरकार द्वारा 500–1000 रुपये के नोटों वैधानिक मान्यता वापस लेने तथा देश में डिजिटल भुगतान की

देश में भ्रष्टाचार व काली कमाई, काली मुद्रा व काली सम्पत्ति का मूल उद्‌गम शत प्रतिशत नकद आधारित मौद्रिक व्यवस्था में निहित है। नकद मुद्रा का कोई रंग नहीं होता है, परन्तु इसका अबाध प्रयोग करप्रवंचन के माध्यम से काली मुद्रा के सृजन में होता है। यह नकद मुद्रा जब बिना कर चुकाये व रिकार्ड में लाये बिना सम्पत्ति, सोना–चाँदी, जवाहरात अवैधानिक व्यापार व उत्पादन में लगाई जाती है तो काले धन का सृजन होता है। इस प्रकार के धन का उपयोग पुन: ऐसे ही धन के सृजन में ही नहीं होता है, वरन् यह अनेक अनुत्पादक-उपभोगों को प्रेरित करती हैं। एक ओर इस प्रकार के धन व सम्पत्ति के सृजन से सरकार वैधानिक करों के रूप में प्राप्त होने वाली आय से वंचित होती है। इस आय का उपयोग सरकार जनहित व विकास के कार्यों में प्रयोग करने वंचित हो जाती है। सरकार को व्यय की पूर्ति के लिए अनेकानेक कर लगाने और करों की दरों को बढ़ाने के लिये विवश होना पड़ता है।

व्यवस्था को आकर्षक बनाने के प्रयासों को इसी संदर्भ में देखा जाना चाहिये।

सरकार द्वारा 500-1000 रुपये के पुराने नोटों को चलन से वापस लेने व नये नोटों के प्रचलन का कदम काली मुद्रा के आधार को समूल नष्ट करने वाला कदम है। अर्थव्यवस्था में प्रचलित 86 प्रतिशत नकद मुद्रा को वापस लेने का निर्णय तो अत्यन्त दूरदर्शी व साहसी प्रधानमंत्री ही ले सकता है। देश के अन्दर लगभग 15.5 लाख करोड़ की राशि के नोट चलन के रूप में जनता के पास थे। प्रारंभिक अनुमान यह था कि 12 लाख करोड़ के नोट ही निर्धारित सीमा तक वापस आ पायेंगे और लगभग 3.5 लाख करोड़ की मुद्रा रह जायेगी। परन्तु भ्रष्टतंत्र में कालेधन वालों की शक्ति व साहस देखिये कि लगभग 14 लाख करोड़ की राशि बैंकों में 500 व 1000 के नोटों के रूप में जमा हो चुकी है। विपक्षी राजनीतिक दल इसे सरकार की असफलता के रूप में महिमामंडित कर रहे हैं व जन साधारण के मन में भ्रम पैदा कर रहे हैं, कि सारा कालाधन सफेद हो गया व निहित स्थार्थ वाला पक्ष घोषित कर रहा है कि कालाधन तो था ही नहीं। परन्तु यह तो एक पहलू है दूसरा पहलू तो अभी शेष है। यह पहली बार है कि सभी प्रकार की चलन मुद्रा बैंकों के रिकार्डस में आ चुकी है। अब यह निर्धारण करना कर अधिकारियों का कार्य है कि वे प्रत्येक खाताधारी के आय के स्रोत से अधिक जमा के बारे में पूछताछ कर अवैधानिक रूप से कमाई गई आय व सम्पत्ति से कर व दण्ड की राशि वसूले व शेष राशि को देश के विकास के प्रयोग हेतु छोड़ दे। इस कदम के सम्भावित लाभ हैं कि सरकार को लाखों करोड़ रुपये कर, दण्ड, सैस व गरीब कल्याण कोष के लिये प्राप्त होंगे। दूसरा बजट घाटा पूरा किया जा सकता है। गरीबों व जरूरतमंदों के लिये अतिआवश्यक कार्यक्रमों में लगाया जा सकता है। सरकार सार्वजनिक व्यय को बढ़ा, अर्थव्यवस्था में ठहराव को समाप्त कर पुनः गतिशील बना सकती है। अर्थव्यवस्था पुनः विकास की दर गति पकड़ सकती है। समस्त आय के रिकार्ड में आ जाने से सरकार प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष करों के भार को कम कर सकती है। सभी प्रकार की आय व सम्पत्ति की गणना सही सही होने से राष्ट्रीय आय में वृद्धि हो सकती है। बदली परिस्थितियों में बैंकों की जमाराशि बढ़ने से ब्याज दरों में कमी कर भारतीय अर्थव्यवस्था वैश्विक रूप से प्रतियोगी बन सकती है। जनसाधाण ने तो सभी प्रकार के कष्ट उठाकर सरकार के प्रयासों को प्रबल समर्थन प्रदान किया है। नोटबंदी के अनेक अल्पकालिक दुष्प्रभाव अवश्य हैं, जिन्हें जनसाधारण सहर्ष उठाने को तत्पर हैं? विश्वास है कि इन अपेक्षित दुष्प्रभावों का असर शीघ्र ही कम हो सकेगा व सुखद परिणामों की अनुभूति का प्रारंभ निकट भविष्य में ही होने लगेगा।

कम नकद के प्रयोग वाली व्यवस्था का औचित्य व आवश्यकता – कालेधन के सृजन को स्थायी रूप से समाप्त करने व भ्रष्टाचार को समूल उखाड़ने के लिये संपूर्ण विश्व में भुगतान के लिये डिजिटल व्यवस्था को अपनाया गया है। भारत भी इसी दिशा में आगे बढ़ने के लिये व्यापक आर्थिक सुधार जिनमें वस्तु व सेवा कर प्रमुख है, के कार्यक्रम अपनाने के साथ-साथ डिजिटल भुगतान व्यवस्था को प्रेरित कर रहा है। देश में नोट बंदी से पूर्व जितनी मुद्रा चलन में थी, उतनी मुद्रा अब चलन में नहीं डाली जायेगी। समस्त वैधानिक लेन-देनों को सम्पन्न करने के लिये जितनी मुद्रा आवश्यक है, उससे कहीं कम मात्रा में नोट चलन में डाले जायेंगे। इन दोनों के अन्तर को डिजिटल भुगतान व्यवस्था द्वारा पूरा किया जायेगा। यही सोच है कि नकद निकासी की सीमा को पूर्णतः उदार नहीं बनाया जायेगा। डिजिटल भुगतान व्यवस्था को आकर्षक बनाने के लिये अनेक प्रोत्साहन दिये जा रहे हैं, डिजिटल भुगतान में आने वाले व्यय को धीरे-धीरे समाप्त करने के प्रयास हो रहे हैं। जैसे-जैसे जनसाधारण इनका अभ्यस्त होता जायेगा, इन भुगतानों का दायरा बढ़ाया जायेगा। बैंकिंग व्यवस्था भी सरलतम, सर्वस्वीकार्य एवं सस्ते भुगतान माध्यम को विकसित करने में लगा है।

डिजिटल भुगतान व्यवस्था को अपनाने का मुख्य औचित्य यह है, कि इस व्यवस्था से संपूर्ण जीडीपी का रिकार्ड उत्पादन, वितरण व आय के रूप में रखा जाना संभव हो सकेगा। इस व्यवस्था में करवचन अत्यन्त कठिन हो जायेगा, जिससे कर-सुधारों को आसानी से अपनाया जा सकेगा। कर भार कम हो सकेगा और सरकार को अधिक वित्तीय संसाधन उपलब्ध हो सकेंगे। सरकार इफ्रास्ट्रक्चर पर अधिक संसाधन लगाकर विनियोगों विशेषकर निजी विनियोगों को प्रेरित कर सकती है। इससे गरीबी को तेजी से कम करना रोजगार के अधिक अवसर सृजित करना संभव हो सकेगा। समाज में बढ़ती आर्थिक व अवसरों की असमानताओं को नियंत्रित करना संभव हो सकेगा।

नकद की वर्तमान कमी से पीड़ित जनसाधारण को डिजिटल भुगतान के लिये तैयार करने में अनेक बाधायें बतायी जाती है। जनसंख्या के बड़े भाग का अशिक्षित होना, इंटरनेट के उपयोग की सुविधा नहीं होना, इन भुगतान के लिये तकनीक की जानकारी नहीं होना आदि-आदि प्रमुख बाधायें बताई जाती है, यह सही है, नकद रूप में भुगतान करना सरलतम है, और किसी भी आवश्यकता या आपात स्थिति का सामना नकद द्वारा किया जा सकता है। इन सभी कठिनाइयों के बावजूद देश का भावी आर्थिक विकास व समृद्धि भुगतान व्यवस्था के परिवर्तन में ही छिपी है। अशिक्षित व अप्रशिक्षित इसी जनसाधारण ने प्रारंभिक हिचकिचाहट के बाद मोबाइल फोन तकनीक को अपनाया। अल्पकाल में ही देश में टेलीफोन का घनत्व व प्रयोग तेजी से बढ़ा है कि आज यह प्रत्येक व्यक्ति के जीवन की एक अनिवार्यता बन गया है। यही वह प्रेरणा है जो डिजिटल भुगतान व्यवस्था को बहुत शीघ्र ही जनस्वीकार्य बनायेगी। इसका अभिप्रायः यह बिलकुल नहीं है कि देश में नकद भुगतान पूर्णतः रुक जायेगा। विश्व की सभी विकसित अर्थव्यवस्थाओं में भी नकद भुगतान उल्लेखनीय सीमा तक होता है। भारत में भी लक्ष्य है कि कम नकद के उपयोग वाली भुगतान व्यवस्था को अपनाया जाये। ❑

(आर्थिक विश्लेषक)

सूर्योदय व चन्द्रोदय के ठीक पहले पूर्व में सितारों की पृष्ठभूमि को देखकर आकाश में इनकी स्थिति का निर्धारण होता है। तारों से बनी विभिन्न आकृतियों को तारामण्डलों के रूप में पहचान कर इनका नामकरण अतिप्राचीन काल से ही किया जाता रहा है। पृथ्वी के अलग अलग भागों में इन्हें अलग नाम दिए गए। वर्तमान में 88 तारामण्डलों को अन्तर्राष्ट्रीय मान्यता प्राप्त है। सप्तऋषि मण्डल तथा मृगा मण्डल आकाश के सर्वाधिक परिचित तारामण्डल हैं। तारा मण्डलों के नामकरण से आकाश में उपस्थित पिण्ड की स्थिति को बताना उसी तरह आसान हो जाता है जैसे पृथ्वी पर स्थित अपने घर का पता महाद्वीप, देश, प्रदेश, गाँव, शहर, गली, मुहल्लों के नाम व मकान नम्बर से होता हैं।

उत्तरायण व मकर संक्रान्ति

❑ विष्णुप्रसाद चतुर्वेदी

भारत में मकर संक्रान्ति का बहुत अधिक धार्मिक, सांस्कृतिक एवं सामाजिक महत्त्व है। वेदांग ज्योतिषकाल (ईसा से 6 या 7 शताब्दी पूर्व) में नक्षत्रों का प्रारम्भ धनिष्ठा नक्षत्र से होता था, उस समय उत्तरायण व मकर संक्राति साथ साथ होते थे। महाभारतकाल में भीष्म पितामह इसी उत्तरायण की प्रतीक्षा में शर-शैय्या पर पड़े रहे। आज उत्तरायण व मकर संक्राति एक साथ नहीं होते। इनमें लगभग 23 दिन का अन्तर पड़ गया है। इसे समझने के लिए हमें पृथ्वी की गतियों को समझना होगा। पृथ्वी की दैनिक गति अर्थात अक्ष पर घूर्णन के कारण दिन रात होते हैं। पृथ्वी की दूसरी गति सूर्य के परिक्रमण की है। कहते हैं कि पहले पृथ्वी का अक्ष व उसकी घूर्णन अक्ष के ठीक लम्बवत हुआ करती थी। पृथ्वी के प्रत्येक भाग पर गिरने वाली सूर्य की किरणों के कोण में वर्ष भर कोई अन्तर नहीं हुआ करता था। पृथ्वी के किसी भाग में वर्ष भर एक समान मौसम रहता था। ऋतुएँ नहीं थी। अगर ऐसा ही रहता तो पृथ्वी पर नीरसता का साम्राज्य होता। एक घटना ने पृथ्वी की अक्ष को हिला दिया। पृथ्वी की अक्ष को झुका दिया। पृथ्वी की अक्ष परिक्रमण पथ के लम्बवत नहीं रहकर 66.5 डिग्री तक झुक गई। वह बदलाव ही पृथ्वी पर ऋतुओं का कारण बना।

उत्तरायण-दक्षिणायन

पृथ्वी के अपनी कक्षा में झुके हुए होने के कारण वर्ष में केवल दो दिन ही सूर्योदय ठीक पूर्व दिशा में होता है। शेष दिन सूर्य उत्तरी या दक्षिणी गोलार्द्ध में रहता है। पृथ्वी से देखने पर सूर्य छः माह उत्तर दिशा से दक्षिण दिशा की ओर तथा छः माह दक्षिण दिशा से उत्तर दिशा की ओर खिसकता नजर आता है। मध्य अवस्था से 23 .5 डिग्री उत्तर (कर्क रेखा) या दक्षिण (मकर रेखा) की ओर जाकर पुनः विपरीत दिशा में लौटने लगता है। सूर्य के दक्षिण से उत्तर की ओर खिसकने को उत्तरायण तथा उत्तर से दक्षिण की ओर खिसकने को दक्षिणायन कहते हैं। सूर्य के उत्तरायण होने के साथ ही दिन लम्बे व रातें छोटी होने लगती है। जबकि दक्षिणायन होने पर दिन छोटा व रात बड़ी होने लगती है। आज हमारे पास प्रकाश व उष्मा उत्पन्न करने के अनेक साधन हैं। हम उत्तरायण को उतना महत्त्व नहीं दे पाते जितना आज से 6000 हजार वर्ष पूर्व दिया जाता होगा। उत्तरायण की स्थिति मानव गतिविधियों के लिए अधिक अनुकूल होने के कारण ही इसे अत्यधिक शुभ मानकर अधिकांश तीज त्योहार व खुशी के कार्य इसी अवधि में किए जाते हैं। ईसाई धर्म में ईसा का जन्मोत्सव 5 दिसम्बर को मनाया जाता है। महान वैज्ञानिक आइजक न्यूटन के अनुसार 25 दिसम्बर तत्कालीन रोमन कलैण्डर में अयनान्त दिवस था। ईशु के जन्म के तुरन्त बाद दिन बड़े होने लगे यह सोचकर ही 25 दिसम्बर की तिथि के चयन किया गया होगा। वर्तमान में 22 दिसम्बर को सूर्य उत्तरायण होने लगा है। स्पष्ट है यह निर्णय 200 - 250 वर्ष पूर्व किया होगा। उत्तर की ओर बढ़ता सूर्य 21 जून को कर्क रेखा को छूकर पुनः दक्षिण की ओर लौटने लगता है। 22 सितम्बर को शरद संपात तथा 22 मार्च को बसन्त संपात होता है। संपात को 'समदिवारात्रि भी कहते है क्योंकि उस दिन 12 घन्टे का दिन व 12 घन्टे की रात होती हैं।

क्या हैं नक्षत्र व राशियाँ?

हम जानते हैं कि पृथ्वी 365 में सूर्य की एक परिक्रमा करती है मगर पृथ्वी से देखने पर सूर्य व

अथर्ववेद के नक्षत्रकल्प में वर्णित 28 नक्षत्र–

1.अश्विनी	2.भरणी	3.कृतिका	4.रोहिणी	5.मृगशिरा	6.आर्द्रा
7.पुनर्वसु	8.पुष्य	9.आश्लेषा	10. मघा	11. पूर्व फाल्गुनी	12.उत्तरा फाल्गुनी
13.हस्त	14. चित्रा	15.स्वाती	16.विशाखा	17.अनुराधा	18.ज्येष्ठा
19.मूल	20.पूर्व आषाढ़	21.उत्तरा आषाढ़	22. श्रवण	23.धनिष्ठा	24.शतभिषा
25. पूर्व भाद्रपद	26. उत्तरा भाद्रपद	27. रेवती	28. अभिजित		

चन्द्रमा, पृथ्वी की परिक्रमा करते नजर आते हैं। सूर्योदय व चन्द्रोदय के ठीक पहले पूर्व में सितारों की पृष्ठभूमि को देखकर आकाश में इनकी स्थिति का निर्धारण होता है। तारों से बनी विभिन्न आकृतियों को तारामण्डलों के रूप में पहचान कर इनका नामकरण अतिप्राचीनकाल से ही किया जाता रहा है। पृथ्वी के अलग अलग भागों में इन्हें अलग नाम दिए गए। वर्तमान में 88 तारामण्डलों को अन्तर्राष्ट्रीय मान्यता प्राप्त है। सप्तऋषि मण्डल तथा मृगा मण्डल आकाश के सर्वाधिक परिचित तारामण्डल हैं। तारा मण्डलों के नामकरण से आकाश में उपस्थित पिण्ड की स्थिति को बताना उसी तरह आसान हो जाता है जैसे पृथ्वी पर स्थित अपने घर का पता महाद्वीप, देश, प्रदेश, गाँव, शहर, गली, मुहल्लों के नाम व मकान नम्बर से होता हैं।

आकाश में चन्द्रपथ पर 28 स्थान चिन्हित कर उनका नामकरण करना ठीक वैसा ही था जैसा वृत्ताकार रेल मार्ग पर स्टेशन बनाते है। स्टेशन के आधार पर किसी भी समय गाड़ी की स्थिति बता सकते हैं। आकाश में सौरपथ व चन्द्रपथ पर स्थित इन 28 चिह्नों को नक्षत्र कहते हैं। बेबीलोन वालों ने इस पथ पर 12 स्टेशनों की कल्पना कर 12 तारा मण्डलों से इनकी पहचान दी। जिन्हें हम राशियाँ कहते हैं। राशियों व नक्षत्रों को साथ करने के लिए 28 वें नक्षत्र अभिजित को छोड़ दिया गया है। पृथ्वी से देखने पर 365 दिन में सूर्यादय या चन्द्रोदय, 12 राशियों या 27 नक्षत्रों की पृष्ठभूमि में, होता दिखाई पड़ता हैं। सूर्योदय एक माह तक एक राशि में उदय होता दिखाई देता है। सूर्य का एक राशि क्षेत्र से दूसरे राशि क्षेत्र में प्रवेश को ही संक्रान्ति कहते हैं। महाभारतकाल में उत्तरायण व मकर संक्रान्ति साथ साथ होते थे। उत्तरायण के कारण ही मकर संक्रान्ति को महत्त्व मिला। भीष्म पितामह इसी उत्तरायण की प्रतीक्षा में शर-शैय्या पर पड़े रहे।

पृथ्वी की तीसरी गति भी है। पृथ्वी की काल्पनिक अक्ष के कोल्हू की लाठ की तरह एक वृत पर धीरे-धीरे खिसकती रहती है। इसे अयनांश भी कहते हैं। अयनांश के कारण पृथ्वी की सूर्य सापेक्ष स्थिति व नक्षत्र सापेक्ष स्थिति में अन्तर हो जाता है। पृथ्वी की काल्पनिक अक्ष वृत पर लगभग 25,800 वर्ष में एक वृत्त पूरा करती है। अयनांश के कारण बसन्त सम्पात प्रतिवर्ष लगभग 20 मिनिट 24.58 सैकण्ड पहले हो जाता है। वैदिककाल में बसन्त संपात मार्गशीर्ष माह में होता था। गीता में कहा गया है मासानाम मार्गशीर्षोऽम। यह ईसापूर्व 4000 वर्ष की घटना रही होगी। अब बसन्त सम्पात चैत्र में होने लगा है तथा भविष्य में ओर भी पहले होने लगेगा। यहाँ यह जानाना भी उचित होगा कि केवल भारतीय महीनों का नामकरण आकाशीय पिण्डों की स्थिति के

नासा द्वारा जारी सूर्य के राशियों में रहने का कलैण्डर

क्र.सं.	राशि	सूर्य के रहने की अवधि
1	मकर	जन. 20 – फर. 16
2	कुम्भ	फर.16 – मार्च 11
3	मीन	मार्च 11 – अप्रैल18
4	मेष	अप्रिल 18 – मई 13
5	वृष	मई 13 – जून 21
6	मिथुन	जून 21 – जुलाई 20
7	कर्क	जुलाई 20 – अग. 10
8	सिंह	अग.10 – सित. 16
9	कन्या	सित.16 – अक्टो. 30
10	तुला	अक्टो. 30 – नव. 23
11	वृश्चिक	नव 23 – नव 29
12	ऑफयूकस	नव 29 – दिस.17
13	धनु	दिस.17 – जन.20

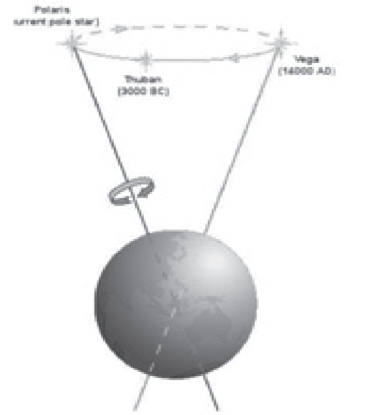

अनुसार होता है। जिस माह जो संक्रान्ति हो उसी नाम पर माह का नाम होता है।

उत्तरायण का 22 दिसम्बर को तथा मकर संक्रान्ति का 14 जनवरी को होना दो अलग घटनाएँ हैं। दोनों तिथियों में फिलहाल अधिक अन्तर नहीं होने के कारण मकर संक्रान्ति का उत्तरायण का संबन्ध बना हुआ है। नक्षत्रों को स्थिर मानकर किए निर्धारित आकाशीय पिण्डों की स्थिति में आज अन्तर आ गया। आज बहुत उन्नत साधन उपलब्ध हैं। नासा ने, ज्योतिष मान्यताओं पर चुप रहते हुए, सूर्य के राशि प्रवेश का कलैण्डर जारी किया है। इस कलैण्डर के अनुसार सूर्य, 12 के स्थान पर 13 राशियों में से गुजर रहा है और मकर संक्रान्ति 20 जनवरी को होती है।

पृथ्वी की अक्ष के बदलने से ध्रुव स्थिति का तारा भी बदल जाता है। अभी पोलेरिस नामक तारा पृथ्वी की अक्ष के ठीक सीध में होने के कारण स्थिर दिखाई देता है। पोलेरिश तारे को ध्रुवतारा कहते हैं, 5000 वर्ष पूर्व अल्फा डेकानिस ध्रुव तारे की भूमिका में था। 5500 वर्ष बाद अल्फा सेफी तारा ध्रुव की स्थिति में होगा। ❑

(बाल एवं विज्ञान विषयक लेखक)

Part-I

Indian Technical Education System

Education in IITs in Today's

That path of education treads over four levels, namely Data, Information, Knowledge and Wisdom. The first transition from Data to Information can be undertaken with the assistance of Computers, the second by Teachers and the third by Gurus. With the number of Technical Institutes & Universities increasing rather sharply over the last two decades, there is a clear shortage of Teachers, not to mention of the Gurus. This has placed the nation at the cross-roads of needing to provide quality technical education, but unable to do so owing to the acute shortage of teachers.

❑ Prof. C.V.R. Murty

1. INTRODUCTION

Technical Education holds a compelling center stage in nation development, especially for a nation like India, who is on the path of industrialisation. It contributes to preparing the hands that manufacture products based on intellectual property generated from within the nation, which form the basis for the prosperity of a nation. Thus, engineers graduating from the portals of technical institutes and universities, have a major responsibility of building India with in-house competence.

A citizen sees education culminating into receiving degrees – Bachelors, Masters and Doctoral degrees. With each degree, a citizen assures oneself of higher economic standing and higher employment stability in life (Figure 1). Thus, providing quality technical education is the responsibility of the technical institutes and universities – of both the Faculty Members and the Academic Administrators.

Figure 1: Education does good to each person – if well utilized, be it in terms of service to mankind or even of economic stability to individual's life

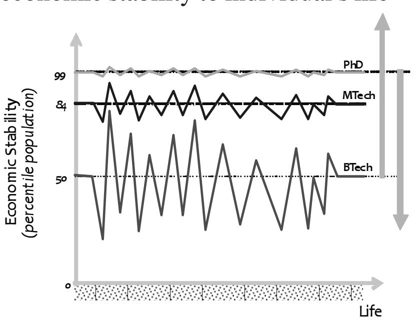

2. CURRENT TRENDS

India's technical education system started growing from 1950s – largely in the government funded institutes and universities. And, a significant change occurred in late 1970s and early 1980s, when technical education became available through privately run institutes and universities. Technical education received another major thrust in 2000s and 2010s, when expansion happened again in government funded institutes. The number of technical institutes stands around 4,000. The only pointed question that remains is: Are the graduates of these technical institutes having the needed competence to be role ready for employment in a technology organization? Many surveys have shown that only 20% of the graduates are employable. Thus, both the Faculty Members and the Academic Administrators need to introspect to roll out a road-map towards climbing this percentage to more respectable values.

Even though many institutes promise Technology education (through Bachelor of Technology and Master of Technology degree programs), most of them (including IITs) position the technical education at a much lower level – largely at Engineering or even lower at Engineering Science level (Figure 2). This positioning may have been appropriate in the 1950s, when technical education was just beginning. But, adopting this positioning in 2010s is seemingly inappropriate for India, because the nation does not produce technology-minded graduates. And, therefore, it is no surprise that

technology industries in India (and even technocrats) are tuned unconsciously to buy technology from other nations... While this may be the only way left today to modernize the nation, it may not be in the interest of India to be a technology follower in a world that is increasingly becoming a knowledge-based economy.

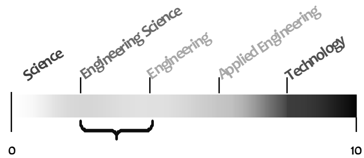

Figure 2: Technical Education offered is over a large spectrum – but, the dominant level at which it is pitched in India is at the Engineering Science Level or at best at the Engineering Level

3. TECHNICAL EDUCATION BASICS

Technical Education leads to professional service by its graduates and hence requires graduates to be made aware, during their stay in Technical Institutes and Universities, of the profession, the acceptable methods of practice, and the compulsions. Hence, the role of Technical Institutes and Universities spans over:

(a) Education – offering formal knowledge on technical subjects through the Bachelor's, Master's and Doctoral Degree Programs;

(b) Research – undertaking Basic, Applied and Targeted Research on the unanswered technical questions in different individual domains and multiple domains; and

(c) Development – involving manufacturing and marketing technical products for the good of humanity.

While Education is a personal effort, Research slowly transforms from personal effort to team effort along the path of from Basic-to-Applied-to-Targeted Research, and Development is a team effort fully (Figure 3).

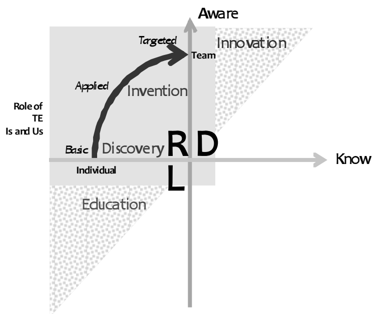

Figure 3: Role of Technical Institutes and Universities is over a rather large canvas – from building individuals (who can discover new truths of nature) to creating teams (which can build technology products for the good of mankind)

From another standpoint, the motion along the spectrum of Education-Research-Development is associated with

(a) Education – moving from being NOT AWARE that YOU DON'T KNOW to BEING AWARE that YOU KNOW;

(b) Discovery – recognizing that nature has a certain fundamental relation between cause and effects, and that these relations are proven through analytical and experimental investigations of science;

(c) Invention – making a product (a component or even a system) for the first time that enable humans to perform a certain function, using formal discoveries of science; and eventually; and

(d) Innovation – re-making a refined product that perform a certain function better and/or that cost lesser.

The canvas of Education-Discovery-Invention-Innovation umbrella maps directly with that of the Science-Engineering-Technology umbrella and also with that of What-Why-How-What Sells umbrella. Clearly, if graduates have to be trained to innovate in their first employment, they must have the knowledge and experience of making something at least once before.

If Indians have to make products within the nation with the intellectual property generated from within the nation, all teachers have to play a significant role to prepare students accordingly – Parents and Teachers in the early years of basic, primary & secondary education, and Technical Institutes & Universities and Faculty Members in the college days.

4. NEW CHALLENGES IN TECHNICAL EDUCATION

That path of education treads over four levels, namely Data, Information, Knowledge and Wisdom. The first transition from Data to Information can be undertaken with the assistance of Computers, the second by Teachers and the third by Gurus. With the number of Technical Institutes & Universities increasing rather sharply over the last two decades, there is a clear shortage of Teachers, not to mention of the Gurus. This has placed the nation at the

cross-roads of needing to provide quality technical education, but unable to do so owing to the acute shortage of teachers.

This shortage of teachers did not arise in a short span, but over the last 3 decades, ever since when the 5-year B.Tech. Programs were recast as 4-year Programs in 1980, in the IITs. This steady downfall in quality trained manpower being inducted as teachers in Institutes of technical education, has led to a number of changes in the technical education system. Technical education evolved into being largely:

(1) Classroom-based, with reducing exposure to the real technology world;

(2) Examination-based, with memory alone being tested as against placing emphasis on learning;

(3) Individual student-based, with little sensitivity to building team skills that are essential for an engineer to be happily ensconced in professional technology work environment;

(4) Individual Faculty Member based, with personal growth alone in focus, and without the much needed national focus, at least in the senior Faculty Members; and

(5) Open market economy based, with complete freedom to students switching completely out of the discipline in which they have been trained during the B.Tech. Program.

In a bid to address the large demographic dividend of India, which needs to be educated (with half of India's population below the age of 26 years), all efforts are being made to make do with the available faculty resources (Figure 4). A seemingly fast way of meeting this need is through Massive Online Open Courses (MOOCS). While the idea is implementable, and significant effort has gone into making the needed preparations, it is unclear if such a large group will be inspired to be self-taught. If it is matter of lower order skills, such courses may be very effective. But, when the needs of education demand higher levels of cognitive competencies, there is no known precedence of offering all three components of competency – knowledge, skill and attitude (which together contribute to building competencies in a person), through computer-based transmission method.

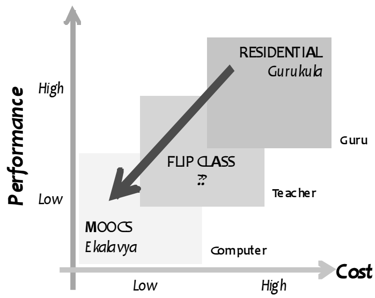

Figure 4: The changing trends and canvas of Technical Education Systems in India – a movement from the highly effective Gurukula System of yester years to the unvalidated Ekalavya System of today's times

5. THE PARTNERSHIP IN PROVIDING TECHNICAL EDUCATION

The Technical Education System needs to play an exemplary role by seamlessly integrating the four stakeholders of the Technical Institutes and Universities – Students & Parents, Technical Institutes & Universities, Technology Industry (along with R&D organizations and Academia, who are potential employers) and Governments (Figure 5). In particular, Faculty Members need to be service motive oriented, and Parents need to refrain from expecting too much from the Technical Institutes (especially in fixing of shortfalls in parenting, by the Institutes during the stay of the students on campuses during the B.Tech. Program).

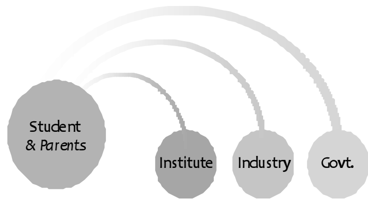

Figure 5: The four stakeholders need to develop mutual respect and consultation to develop a vibrant technical education system – the goal is the Nation Development, not the just that of the Students

Ideally, Parents of students need be interested in developing their children to be role ready to build strong careers in technology, in contrast to making them seek a degree for generic employment. This Pull Model is critical to development of technology hands to build India's economic status. Institutes and Industry need to undertake a positive campaign to showcase the magnum opus of careers in Technology.

6. THE ACTION PLAN

The knowledge required is available, to build a new B.Tech.

Program with technology focus (Figure 6). The first major change, which is required urgently, is a shift from Teacher-centric Technical Education to Student-centric Technical Education, thereby bring learning focus in technical education, in contrast to the current teaching focus. The know-how to build outcome-based Technical Education is available from the international practice; only some customisation and even lesser new strategy development may be required.

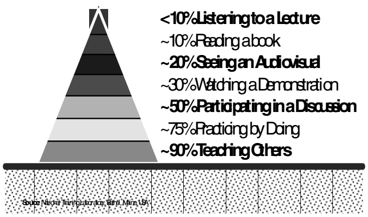

Figure 6: Effectiveness of the Lecture method is abysmally low – newer methods need to be adopted, which engage the minds of students in a holistic sense.

This is easier said than done, largely because of a complete re-training of the mindsets of current Faculty Members employed in the technical institutes and universities; they need to develop and internalize Quality, Accountability and Professionalism as the top three professional values (Figure 7). While they may have their eyes on outputs (meaning, on what is produced) in the short run, they need to set their agendas on outcomes (meaning, on what is achieved) in the medium run, and especially on impact (meaning, on what is changed in their subject domains in the country) in the long run, through their activities related to technical education, research and development undertaken during their career. Of the three values to be practiced by Faculty Members, quality consciousness will be most essential to be able to reach out meaningful technical education to larger student group (i.e., quantity). They need to recognize the distinction between being competitive or laid back, in contrast to walking the track of guaranteeing excellence in technical education with same, if not lesser, effort.

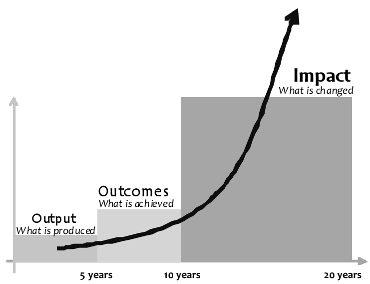

Figure 7: Three-level Focus is required in Faculty Members – what is good for the Nation should be achieved through the actions of these individuals in the short-, medium- and long-runs

7. THE TWO LIMITS OF ACCEPTABLE HUMAN CONDUCT – VALUES AND ETHICS

Faculty Members of technical institutes & universities bring Values from their homes, and imbibe Ethics from society; these two stand as the bounding lower-bound and upper bound limits of conduct of Faculty Members throughout their careers (Figure 8). Recent trends have shown that there has been erosion in both Values and Ethics held by Faculty Members – the former owing to poor or no parenting, and the latter owing to negative peer pressure. Erosion of human values needs to be examined by technical institutes & universities carefully and sincerely at the time of Faculty Selection; any compromise made in this regard during Faculty Selection, will endanger the future of the technical institutes & universities. Further, Selection of Faculty Members with poor human values can throw open another danger of erosion in their ethical standards during their employment at the technical institutes & universities; compromises in human values will result in moving the limits of their ethical conduct during their employment. Any erosion of both limits of values and ethics of Faculty Members is most unfortunate, not only for the technical institutes & universities, but also for the nation.

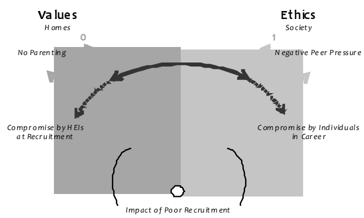

Figure 8: Academic Institutes & Universities clarify the limits within which graduates need to conduct in their real lives as they leave the portals of academic life

In attempting to understand who a desirable Faculty Member is, a long list of attributes is populated. But, on any such list, the top few items will include: (1) Good education, (2) Lifelong learners, (3) Good communication skills, (4) Leadership abilities (e.g., dynamic, agile, resilient, and flexible), (4) High ethical standards, (5) Pro-

fessionalism, and (6) Ability to analyse national needs and offer solutions. If the carefully selected Housekeepers (i.e., Faculty Members) are to create valuable and honourable Homeowners (i.e., technical human resources to man the technology development agenda of the nation), items (5) and (6) stand as the most critical aspect to be examined in prospective Faculty Members before selecting them as Faculty Members.

8. COLLECTIVE NATIONAL GOAL

For building a strong nation from technology standpoint, collective wisdom directed to national development is needed at all levels – Technical Education System, Technical Institutes & Universities, Individual Faculty Member, Individual Staff Member, and Individual Student levels. In the current times, traits are noticed in Faculty Members (who are seeking promotions and administrative positions) and Students (who are seeking mostly degrees, which have brand value), even before meeting their primary roles and responsibilities. While their seeking personal gains is understandable in the context of materialistic world that they are surrounded by, a desire needs to be kindled in them to seek benefits of higher order (like scholarship).

This may not happen naturally without any explicit effort to coerce their mind and heart to think of higher goals. Students need to be trained and regularly reminded of the national agenda; some of these methods could include extra-curricular and team activities with national flavour, like NCC, NSS and NSO. Clearly, they need to kept away from any activity that requires them to blindly accept and support another person's ideology. This is because they are themselves passing a transition of learning to live a life by themselves without the daily intervention of their parents. When they are hardly able to conduct themselves with comfort, it is improper to expect that they will sort out any national issue or agenda. And, on the other hand, Faculty Members need to engage in national S&T programs. These engagements of students may be given marks that count in their studies, and of Faculty Members may be given weight in Promotions and Career Advancements.

9. IITs AND TECHNICAL EDUCATION

The Indian Institutes of Technology (IITs) have been forerunners in the country for half-century (1956-2006), because they were able to attract:

(a) Top quality Faculty Members committed to the best – quality teaching and with some focus on research,

(b) Top Students to the undergraduate programs, and

(c) Relatively good funding from various sources, especially the Government of India.

These top quality Faculty Members produced finest graduates, and IITs became hallmark of quality technology undergraduate education across the world.

At the half-way mark (around late 1980s and early 1990s), the picture changed; the first guards, who joined during 1960s and 1970s, started superannuating. IITs were unable to attract sufficient quality Faculty Members at the same pace as the retirements were happening. The Y2k boom, fewer graduates seeking Masters education and even fewer Doctoral education, greater pay packages in private sector, and some deterioration at the IIT system, have made faculty positions less attractive in IITs. The problem got compounded in 2008, when 8 new IITs started, and even more challenged by 2015, when three more were added and some more announced. An analysis of the choices of the graduates (especially of the IITs) suggests that students from the front of the class are not seeking higher education. This is reflected in the current applications for faculty positions in engineering disciplines, wherein:

(1) very few B.Tech. graduates of IITs are seeking faculty positions, and

(2) most applicants are those who studied in Colleges of Engineering other than IITs and NITs.

So, today the technical education is being administered by those hands, which may not have had the best academic training. Thus, the technical education system is faced with a Twin Challenge scarcity and quality. (contd...)

(Director, Indian Institute of Technology, Jodhpur)

'उच्च शिक्षा में परीक्षा सुधार' राष्ट्रीय संगोष्ठी अजमेर में सम्पन्न

अखिल भारतीय राष्ट्रीय शैक्षिक महासंघ एवं वाणिज्य संकाय, मदस विश्वविद्यालय, अजमेर के संयुक्त तत्वावधान में 'उच्च शिक्षा में परीक्षा सुधार' विषय पर आयोजित दो दिवसीय राष्ट्रीय संगोष्ठी के उद्घाटन सत्र में मुख्य वक्ता राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के अ.भा. सम्पर्क प्रमुख प्रोफेसर अनिरुद्ध देशपांडे, मुख्य अतिथि राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर के कुलपति प्रो. जे.पी. सिंघल, विशिष्ट अतिथि अ.भा.रा. शैक्षिक महासंघ के राष्ट्रीय संगठन मंत्री महेन्द्र कपूर, अध्यक्षता मदस विश्वविद्यालय, अजमेर के कुलपति प्रो. कैलाश सोडाणी, आयोजन संयोजक प्रोफेसर बी.पी. सारस्वत एवं आयोजन सचिव डॉ. एस. के. बिस्सू रहे।

मुख्य वक्ता प्रोफेसर देशपांडे ने कहा कि परीक्षा व्यवस्था में छात्र, शिक्षक व समाज की विश्वसनीयता स्थापित करने के लिए हमें प्रयत्नशील होना चाहिए। उन्होंने परीक्षा पद्धति में पारदर्शिता पर जोर दिया और बताया कि परीक्षा व्यवस्था में समग्रता को लाना होगा। आज विश्वविद्यालय मात्र परीक्षा कराने वाली संस्थान बन कर रह गये हैं जबकि विश्वविद्यालयों को शिक्षण के साथ शोध/अनुसंधान पर जोर देना बहुत जरूरी है।

मुख्य अतिथि प्रो. जे.पी. सिंघल ने बताया कि पाठ्यक्रमों में सुधारवादी दृष्टिकोण लाते हुए उसे देश की संस्कृति से जोड़ने की आवश्यकता है। साथ ही वह दुनिया के किसी भी विश्वविद्यालय के पाठ्यक्रम से कम न हो अर्थात एकरूपता हो। परीक्षा की व्यवस्था वैश्विक रूप से स्वीकार्य (Globaly acceptiable) हो एवं पारदर्शी हो। साथ ही परीक्षा व्यवस्था में मानवीय प्रयास कम हो एवं यांत्रिक प्रयास अधिक हो।

अध्यक्षीय उद्बोधन में प्रो. सोडाणी ने कहा कि पाठ्यक्रम निर्माण एवं परीक्षा व्यवस्था में गंभीरता लाने की नितांत आवश्यकता है। आज के परिप्रेक्ष्य में विस्तृत क्षेत्र में परीक्षा व्यवस्था में सुधार की आवश्यकता महसूस की जा रही है और इस पर लगातार चिंतन मनन चल रहा है। समय-समय पर सुधार हो भी रहे हैं जिनके परिणाम हमारे सामने आ रहे हैं।

आयोजन संयोजक प्रो. सारस्वत ने बताया कि आज एक ऐसी परीक्षा पद्धति की आवश्यकता है जो विद्यार्थियों को राष्ट्र व समाज के लिए संवेदनशील बना सकें।

संगोष्ठी में कुल तीन तकनीकी सत्र रहे जिनमें प्रथम सत्र में अध्यक्ष प्रो. के.सी. शर्मा एवं विषय विशेषज्ञ प्रो. अनुराग मिश्रा एवं आशीष भटनागर रहे। यह तकनीकी सत्र च्वाइस बेस क्रेडिट सिस्टम (CBCS) एवं क्रेडिट स्थानान्तरण पर आधारित रहा। इसमें प्रो. शर्मा ने बताया कि वर्तमान तकनीक के युग में वैश्विक माँग के अनुरूप हमें और कार्य करते हुए सम्पूर्ण ज्ञान की तरफ बढ़ना है। सीबीसीएस इस दिशा में एक अग्रणी व्यवस्था है।

द्वितीय तकनीकी सत्र परीक्षा की श्रेष्ठ मूल्यांकन पद्धति पर आधारित रहा जिसमें शैक्षिक मंथन पत्रिका के सम्पादक प्रो. संतोष पाण्डेय ने अध्यक्षता, विषय विशेषज्ञ रुक्टा राष्ट्रीय के अध्यक्ष प्रो. दिग्विजय सिंह शेखावत एवं डॉ. हेमचन्द जैन रहे। प्रो. पाण्डेय ने विस्तृत प्रकाश डालते हुए बताया कि भारतीय शिक्षा एवं परीक्षा प्रणाली सर्वश्रेष्ठ रही है जिसका उदाहरण उन्होंने नालन्दा एवं तक्षशिला विश्वविद्यालय से दिया और निकट भविष्य में भी देशानुकूल एवं विषयानुकूल सुधार होते रहेंगे जिससे देश में शिक्षा की एक उच्च स्तरीय व्यवस्था हो सकेगी।

संगोष्ठी के दूसरे दिन तृतीय तकनीकी सत्र में कोटा विश्वविद्यालय के कुलपति प्रो. पी.के. दशोरा तथा महर्षि दयानन्द सरस्वती विश्वविद्यालय की प्रो. ऋतु माथुर मुख्यवक्ता रहे। इस सत्र में प्रतिभागियों ने परीक्षा में नवाचार एवं उनमें गुणात्मक सुधार पर चर्चा की। डॉ. पी. के. दशोरा ने अपने वक्तव्य में कहा कि मूल्यांकन ऐसा होना चाहिए कि जिससे यह पता चले कि विद्यार्थी ने कितना ज्ञान अर्जन किया है।

अखिल भारतीय राष्ट्रीय शैक्षिक महासंघ एवं वाणिज्य संकाय, महर्षि दयानन्द सरस्वती विश्वविद्यालय, अजमेर के संयुक्त तत्वावधान में उच्च शिक्षा में परीक्षा सुधार विषय पर आयोजित दो दिवसीय संगोष्ठी का समापन समारोह माध्यमिक शिक्षा बोर्ड, राजस्थान के अध्यक्ष प्रो. बी.एल. चौधरी के सानिध्य में सम्पन्न हुआ। प्रो. चौधरी ने कहा कि वर्तमान शिक्षा प्रणाली अपनी व्यवहारिकता खो रही है इस कारण समाज में लगातार संकुचित मानसिकता का विस्तार हो रहा है। यह समय की आवश्यकता है कि नई शिक्षा प्रणाली बनाई जाये जो कि आत्मिक, मानसिक, सामाजिक एवं राष्ट्रीय व्यवहार की पोषक हो। उन्होंने कहा कि उच्च उपाधि के मूल्यांकन का स्तर भी उपाधि के अनुरूप होना चाहिए। कार्यक्रम की अध्यक्षता महर्षि दयानन्द सरस्वती विश्वविद्यालय के कुलपति प्रो. कैलाश सोडाणी ने की उन्होंने अपने उद्बोधन में उच्च शिक्षा केन्द्रों को स्वायत्तता एवं रिक्त पदों को भरने की आवश्यकता बताई। कार्यक्रम के विशिष्ट अतिथि अखिल भारतीय राष्ट्रीय शैक्षिक महासंघ के राष्ट्रीय संगठन मंत्री महेन्द्र कपूर ने संगठन की गतिविधियों की जानकारी देते हुए बताया कि वर्तमान सत्र में महासंघ देश के विभिन्न कोनों में आठ राष्ट्रीय स्तर की संगोष्ठियाँ आयोजित कर रहा है। उन्होंने कहा कि शैक्षिक परिवार की परिकल्पना एवं शिक्षा को समाज में पूर्ण महत्ता दिलाना ही शैक्षिक महासंघ का मुख्य ध्येय है। कार्यक्रम में संगोष्ठी निदेशक प्रो. बी.पी. सारस्वत ने सभी अतिथियों एवं प्रतिभागियों का धन्यवाद ज्ञापित किया।

संगोष्ठी के आयोजन सचिव डॉ. एस. के. बिस्सु ने बताया कि दो दिवस में देश भर से आये कुल 38 प्रतिभागियों ने पत्र वाचन किया एवं 113 प्रतिभागियों ने इस संगोष्ठी में सहभाग किया। डॉ. बिस्सु ने कहा कि दो दिवसीय संगोष्ठी में हुए मंथन से जो निष्कर्ष प्राप्त हुए हैं वे राजस्थान सरकार एवं केन्द्र सरकार के उच्च शिक्षा विभाग को भिजवाए जाएँगे।

अ.भा. महिला कार्यकर्ता अभ्यास वर्ग वडोदरा में सम्पन्न

अखिल भारतीय राष्ट्रीय शैक्षिक महासंघ का अखिल भारतीय महिला कार्यकर्ताओं का दो दिवसीय अभ्यास वर्ग दिनांक 17 व 18 दिसम्बर, 2016 को भक्तिधाम सोंखड़ा, बड़ोदरा में सम्पन्न हुआ। अभ्यास वर्ग परिवार एवं कुटुम्ब प्रबोधन विषय पर केन्द्रित रहा। दो दिवसीय अभ्यासवर्ग उद्घाटन एवं समारोप सहित कुल दस सत्रों में सम्पन्न हुआ। दिनांक 17 दिसम्बर को उद्घाटन सत्र की मुख्यवक्ता के रूप में राष्ट्रीय सेविका समिति की अखिल भारतीय सम्पर्क प्रमुख माननीया भाग्यश्री साठे की प्रेरणादायी उपस्थिति रही। इस सत्र की अध्यक्षता अ.भा.रा.शैक्षिक महासंघ की महिला संवर्ग की अध्यक्ष प्रियवंदा सक्सेना ने की। उद्घाटन सत्र के विशिष्ट अतिथि के रूप में महासंघ के अध्यक्ष माननीय विमल प्रसाद अग्रवाल का मार्गदर्शन मिला। कुटुम्ब विषय आधारित इस वर्ग की प्रासंगिकता हेतु विषय प्रवर्तन श्रीमती आर. सीतालक्ष्मी द्वारा किया गया।

प्रथम दिन कुल चार सत्र सम्पन्न हुए जिनमें परिवार के केन्द्र में मातृ शक्ति विषय पर मुख्य वक्ता डॉ. कल्पना पाण्डे, परिवार की अवधारणा विषय पर डॉ. सुदेश शर्मा, परिवार का स्वरूप विषय पर डॉ. निर्मला यादव एवं अन्तिम सत्र में परिवार व्यवस्था व प्रशासन की जिम्मेदारी विषय पर भाग्यश्री साठे मुख्य वक्ता रही। इन विभिन्न सत्रों में डॉ. रेखा भट्ट, रामेश्वरी शर्मा, डॉ. अल्पना कटेजा और तृप्ति ठक्कर की अध्यक्षता रही। 17 दिसम्बर को ही माननीया भाग्यश्री साठे द्वारा पावर पाइण्ट प्रजेन्टेशन द्वारा 'परिवार मंगलम धन्यो गृहस्थाश्रम' विषय पर प्रेरणादायी उद्बोधन हुआ।

दूसरे दिन के प्रथम सत्र में विभिन्न शिक्षक संगठनों द्वारा आयोजित महिला कार्यक्रमों की जानकारी विषय पर केन्द्रित रहा। सत्र की अध्यक्षता महासंघ के अध्यक्ष डॉ. विमल प्रसाद अग्रवाल ने की।

द्वितीय सत्र में प्राथमिक माध्यमिक और उच्च शिक्षा क्षेत्र में कार्यरत महिला कार्यकर्ताओं की संवर्गश: बैठक सम्पन्न हुई। प्राथमिक संवर्ग की बैठक संजीवनी रायकर ने, माध्यमिक संवर्ग की बैठक प्रियवंदा सक्सेना तथा उच्च शिक्षा संवर्ग की बैठक डॉ. निर्मला यादव की अध्यक्षता में सम्पन्न हुई।

तृतीय सत्र महिला कार्यकर्ताओं की समस्याओं और प्रश्नोतरी पर केन्द्रित रहा। जिसमें अभ्यास वर्ग में उपस्थित सभी महिला कार्यकर्ताओं ने भाग लेकर अपने विचार व्यक्त किये।

समापन सत्र में माननीया भाग्यश्री साठे एवं डॉ. विमल प्रसाद अग्रवाल का पाथेय प्राप्त हुआ। इस दो दिवसीय महिला कार्यकर्ता अभ्यास वर्ग में सात राज्यों की 71 महिला कार्यकर्ता उपस्थित रही।

अभ्यास वर्ग के दोनों दिन महासंघ के राष्ट्रीय संगठन मंत्री महेन्द्र कपूर, ओमपाल सिंह राष्ट्रीय सह संगठन मंत्री एवं शैक्षिक महासंघ के वरिष्ठ पदाधिकारी श्रीमान् के. नागभूषण राव, बालकृष्ण भट्ट, महेन्द्र कुमार, का सानिध्य एवं मार्गदर्शन मिला।

मध्यप्रदेश शिक्षक संघ का प्रान्तीय महिला अभ्यास वर्ग डबरा में सम्पन्न

नारी शक्ति से ही राष्ट्र का विकास संभव : झा

मध्यप्रदेश शिक्षक संघ द्वारा दो दिवसीय प्रांतीय महिला अभ्यास वर्ग का आयोजन डबरा नगर के ठाकुर बाबा रोड स्थित शहनाई गार्डन में 24 दिसम्बर 2016 को किया गया। उद्घाटन सत्र के मुख्य अतिथि राज्य सभा सांसद प्रभात झा थे। माँ सरस्वती के चित्र पर दीप प्रज्वलन व माल्यार्पण से कार्यक्रम का शुभारंभ हुआ। मुख्य अतिथि ने कहा कि देश की आधी आबादी की उपेक्षा के बाद देश का विकास संभव नहीं है। भारत में नारी को देवी स्वरूपा सम्मान दिया जाता है। इसलिए माँ को जगत जननी कहते हैं। यदि राष्ट्र को विकास की ओर अग्रसर करना है तो नारी सशक्तिकरण की ओर बढ़ाना ही होगा। मध्य सत्र में मुख्य अतिथि जल संसाधन मंत्री डॉ. नरोत्तम मिश्र उपस्थित हुए। उन्होंने भी कार्यक्रम को संबोधित किया। समापन सत्र में मुख्य अतिथि जिला पंचायत अध्यक्ष मनीषा भुजबल ने इस तरह के आयोजन के लिए संगठन को शुभकामनाएँ देते हुए कहा कि नारी सशक्तिकरण के इस युग में ऐसे संस्कारित करने वाले आयोजन बहुत आवश्यक है।

कार्यक्रम के मुख्य वक्ता डॉ. बी.के. सविता ने लिंगानुपात पर चिंता व्यक्त करते हुए बताया कि यदि हम महापुरुषों के बताए अनुसार संस्कार अपने बच्चों तथा छात्रों को दें तथा माता-पिता जैसे आदर्श प्रस्तुत करें तो नारी शक्ति स्वत: सशक्त हो जाएगी।

अभ्यास वर्ग में वक्ता के रूप में उपस्थित मध्यप्रदेश शिक्षक संघ की प्रांतीय संयोजिका ममता राठौड़ ने कहा कि आज की नारी इतनी योग्य है कि वह परिवार, समाज व राष्ट्र का नेतृत्व करने के लिए भी तैयार है। हम अभ्यास वर्ग के माध्यम से कार्यकर्ता का निर्माण करते हैं। फिरोजाबाद के शासकीय कन्या महाविद्यालय की प्राचार्य निर्मला यादव ने कहा कि नारी माँ के रूप में बालक की गुरु होती है। लेकिन नन्हें बालक को पुरुष, शिक्षक की अपेक्षा नारी शिक्षका गुरु का दायित्व बखूबी निर्वाह करती है। क्योंकि वह बालक की भावनाओं से परिचित होती है। प्रांताध्यक्ष प्रदीप कुमार सिंह ने भी कार्यक्रम को संबोधित किया। मंचासीन अतिथियों का स्मृति चिन्ह, शॉल व श्रीफल देकर सम्मान किया गया। कार्यक्रम का संचालन कविता समाधिया ने किया।

अखिल भारतीय राष्ट्रीय शैक्षिक महासंघ

महासंघ के प्रतिनिधिमंडल की केन्द्रीय मानव संसाधन विकास मंत्री से वार्ता

अखिल भारतीय राष्ट्रीय शैक्षिक महासंघ के उच्च शिक्षा संवर्ग का 6 सदस्यीय प्रतिनिधिमंडल माननीय मंत्री श्री प्रकाश जावड़ेकर जी और संयुक्त सचिव श्री सुखबीर सिंह संधू से मिला। प्रतिनिधिमंडल में श्री महेंद्र कपूर, राष्ट्रीय संगठन मंत्री, डॉ. निर्मला यादव, श्री महेंद्र कुमार, प्रो. प्रग्नेश शाह, डॉ. मनोज सिन्हा और डॉ. अनुराग मिश्रा (दिल्ली राज्य संयोजक) शामिल थे। इस भेंटवार्ता में शिक्षकों से जुड़े निम्नलिखित विषयों पर चर्चा हुई।

1. छठे वेतन आयोग की विसंगतियों को दूर करना। इन विसंगतियों में एपीआई, पीबीएएस को खत्म करने तथा पुराने सभी मामलों में इस स्कीम से छूट दिए जाने तथा सभी प्रकार की वैतनिक विसंगतियों को दूर करने की बात कही। मानव संसाधन विकास मंत्री जी ने आश्वासन दिया कि सभी विसंगतियाँ यू जी सी के साथ बातचीत करके दूर की जाएँगी और इस विषय में यू जी सी के सचिव को निर्देश भी दिया जा चुका है। ज्ञात रहे कि शैक्षिक महासंघ का प्रतिनिधिमंडल जल्द ही यू जी सी अधिकारियों से भी इस विषय में भेंटवार्ता करेगा। एपीआई, पीबीएएस प्रमोशन स्कीम से छूट कम से कम 31-12-2015 तक दी जाए।
2. यह भी माँग की गई है कि सातवें वेतन आयोग द्वारा जो वेतनमान दिए जाए, वह सेवा शर्तों से जोड़े नहीं जाने चाहिए। प्रमोशन टाइम बाउंड रहना चाहिए। एक सही प्रमोशन नीति की स्थापना करनी चाहिए। इस विषय में मंत्री महोदय ने प्रतिनिधिमंडल से वैकल्पिक प्रमोशन स्कीम का प्रारूप माँगा है, जो उन्हें जल्द ही उपलब्ध कराया जायेगा।
3. शिक्षकों को दिए जाने वाले वेतनमान सरकारी कर्मचारियों की तुलना में एक सीढ़ी ऊपर होना चाहिए, शिक्षकों का वेतनमान पुरानी स्कीम के अकादमिक ग्रेड पे 7000 के बराबर फिक्स किया जाना चाहिए।
4. शिक्षकों को कम से कम चार प्रमोशन मिलने चाहिए असिस्टेंट प्रोफेसर (नियुक्ति पर) के उपरांत, असिस्टेंट प्रोफेसर (सीनियर स्केल-1), असिस्टेंट प्रोफेसर (सीनियर स्केल-2), एसोसिएट प्रोफेसर और प्रोफेसर के रूप में शिक्षकों के प्रमोशन होने चाहिए।
5. हर विश्वविद्यालय के स्तर पर रिसर्च और इनोवेशन क्लस्टरों की स्थापना की जाए जिससे कि स्थानीय स्तर पर शिक्षकों को इसकी सुविधा दी जा सके।
6. यूजीसी द्वारा राज्य सरकारों के शिक्षा विभागों को स्टेट हायर एजुकेशन कॉउन्सिल बनाये जाने का निर्देश दिया जाये।
7. शिक्षकों के लिए ग्रीवांस रेड्रेसल यूनिट विश्वविद्यालय और कॉलेज स्तर पर बनाई जाए।
8. जिन शिक्षकों ने एमफिल, एलएलएम, एमटेक, पी-एचडी की योग्यता हासिल की है उन्हें 3-5 अतिरिक्त वेतनवृद्धि की सुविधा दी जाए।
9. शिक्षकों को बेहतर स्वास्थ्य सुविधाएँ, रिहायशी सुविधाएं, मेडिकल ग्रुप इंश्योरेंस, लाइफ इंश्योरेंस, अपने बच्चों की शिक्षा और स्वास्थ्य के लिए सस्ते लोन की सुविधाएँ, सार्क देशों में एलटीसी, एचटीसीए ग्रेच्यूटी में वृद्धि, इनकम टैक्स में छूट आदि दी जानी चाहिए।
10. वेतन के एरियर एकमुश्त और जल्दी दिए जाएँ।
11. एडहॉक शिक्षकों की स्थाई नियुक्ति प्रक्रिया तुरंत शुरू की जाए।

शैक्षिक मंथन 'कर्त्तव्य पथ' विशेषांक के प्रकाशन पर हार्दिक शुभकामनाएँ

नाभिषेकोन संस्कारः सिंहस्य क्रियते मृगैः।
विक्रमार्जित राज्यस्य स्वयमेव मृगेन्द्रता।।

निवेदकः

संतोष चौधरी

पब्लिक रोज शिक्षा समिति

हन्तारा (भरतपुर)

शैक्षिक मंथन 'कर्त्तव्य पथ' विशेषांक के प्रकाशन पर हार्दिक शुभकामनाएँ

कृतं मे दक्षिणे हस्ते जयो मे सव्य आहितः
यदि कर्त्तव्य मेरे दाँये हाथ में रहता है तो जय (सफलता) बायें हाथ का खेल है।

पंचायत समिति-उपलब्ध रोजगार

1. दीनदयाल उपाध्याय कौशल योजना
2. निर्मल भारत स्वच्छता अभियान
3. जन्म-मृत्यु पंजीयन कार्य
4. राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना
5. जननी सुरक्षा योजना, विधवा, वृद्धावस्था, पेंशन योजना
6. आधार, भामाशाह, नामांकन कार्ड निर्माण करना
7. वृक्षारोपण, जल संरक्षण योजना

(मुकेश पोरवाल)
विकास अधिकारी
पंचायत समिति सरवाड़

(किशन लाल बैरवा)
प्रधान
पंचायत समिति सरवाड़

राजस्थान सरकार से मान्यता प्राप्त एवं राजस्थान विश्वविद्यालय से सम्बद्ध

स्थापित जुलाई, 2003

रजि. क्रमांक- पं.2(214)/शिक्षा-4/2003

सचिव
डॉ. बाल मुकुन्द दीक्षित

संचालक
श्री राधाकृष्ण शर्मा

अध्यक्ष
श्री सुरेश शर्मा

महर्षि परशुराम स्नातकोत्तर महाविद्यालय

रामबाग, रींगस रोड-दांता (सीकर)

मो. 9413344372, 9928186949, 8560096315, 9928928042

रजि. नं.- एफ 4(178) आकाशी/अनु./10/1068/2010

राजस्थान विश्वविद्यालय से सम्बद्ध महाविद्यालय

महर्षि परशुराम महाविद्यालय

सरकारी अस्पताल के पास, कि. रेनवाल (जयपुर)

प्रवेश प्रारम्भ

निर्माणाधीन निजी कॉलेज भवन

01 जुलाई से शिक्षण कार्य प्रारम्भ

महाविद्यालय की विशेषताऐं :-

सुसज्जित एवं सम्पूर्ण सुविधाओं से युक्त कक्षा कक्ष एवं प्रयोगशालाऐं

- ★ अध्ययन के साथ-साथ प्रतियोगी परीक्षाओं की नि:शुल्क तैयारी
- ★ खुले वातावरण में स्वयं का नवनिर्मित भवन
- ★ ST, SC, SBC और OBC को नियमानुसार छात्रवृति
- ★ विश्वविद्यालय स्तरीय अनुभवी एवं योग्यताधारी प्रवक्ताओं द्वारा समस्त विषयों का अध्यापन
- ★ व्यक्तित्व विकास पर पाक्षिक सेमिनारों का आयोजन
- ★ शुद्ध पेयजल हेतु वॉटरकूलर (RO) सुविधा
- ★ 12वीं में 80प्रतिशत या इससे अधिक प्रतिशत प्राप्त छात्र/छात्राओं को इंस्पायर स्कॉलरशिप
- ★ पाठ्यक्रम के अतिरिक्त English Spoken
- ★ निबन्ध लेखन, भाषण कला, मंच संचालन व वाद विवाद पर विशेषज्ञों के सानिध्य में साप्ताहिक सेमिनार

आधुनिक सुविधाओं से युक्त खेल मैदान

Computer Eudcation

आस-पास के क्षेत्र का सर्वश्रेष्ठ परीक्षा परिणाम देनेवाला अनुशासित एवं चरित्रवान कॉलेज

अध्यक्ष/संस्थापक :- सुरेश शर्मा
(जिला परिषद सदस्य सीकर)

प्रबंधक :- डॉ. बालमुकुन्द दीक्षित

सचिव :- जगदीश ताकर

निदेशक :- बलदेव गोदारा

Vehicle Facility

Cont. No. : 9667778988, 9413344372, 8829862574, 9928186949

शैक्षिक मंथन 'कर्त्तव्य पथ' विशेषांक के प्रकाशन पर हार्दिक शुभकामनाएँ

विद्या भारती, चित्तौड़ प्रांत

विद्या भारती चित्तौड़ प्रांत का उद्‌देश्य विद्यार्थियों में नैतिक, आध्यात्मिक, चारित्रिक गुणों का विकास कर राष्ट्र समर्पित जीवन का निर्माण करना है। विद्यार्थियों के गुणों के विकास के लिए संस्था द्वारा 12 जिलों में चलाये जा रहे विद्यालयों की स्थिति निम्न प्रकार है :-

औपचारिक शिक्षा केन्द्र

विद्यालय	संख्या	छात्र संख्या			आचार्य संख्या		
		भैया	बहिन	योग	आचार्य	आचार्या	योग
उच्च माध्यमिक	19	748	394	1142	37	31	68
माध्यमिक	85	7211	3834	11045	256	223	479
उच्च प्राथमिक	85	12488	6863	19351	421	367	755
प्राथमिक शिशुवाटिका सहित	83	30367	20564	51201	1117	974	2091
योग	**272**	**51084**	**31655**	**82739**	**1831**	**1595**	**3426**

अनौपचारिक शिक्षा केन्द्र

	संख्या	छात्र संख्या	आचार्य संख्या
संस्कार केन्द्र	251	5020	260
एकल विद्यालय बांसवाड़ा परियोजना	787	25164	798
एकल विद्यालय सोधवाड़ क्षेत्र	31	1261	53
योग	**1089**	**31445**	**1111**

प्रांत में तीन अर्द्ध आवासीय विद्यालय कोटा, डूँगरपुर एवं चित्तौड़गढ़ में तथा एक निःशुल्क अर्द्ध आवासीय विद्यालय कोठारा (बाँसवाड़ा) में चलता है।

अतः सभी बंधुओं से आग्रह है कि अपने बच्चों को संस्कारित एवं गुणवान बनाने के लिए उन्हें विद्या भारतीय द्वारा संचालित विद्यालयों में प्रवेश दिलाए।

रामप्रकाश बंसल
अध्यक्ष

सुरेन्द्र सिंह राव
मंत्री

ज्ञान ! चरित्र ! संस्कार !

श्री गुरुजी छात्रावास

उ.मा. आदर्श विद्या मन्दिर, राजापार्क, जयपुर

(विद्या भारती से सम्बद्ध) दूरभाष : 2815249, मो.: 9799394656 (विद्या भारती से सम्बद्ध)

छात्रावास प्रवेश सूचना सत्र 2017-18

विशेषताएँ

1. उच्च योग्यता प्राप्त अनुभवी आचार्य
2. खेलकूद हेतु विस्तृत मैदान एवं योग्य प्रशिक्षक
3. वन विहार एवं देश दर्शन कार्यक्रम
4. स्पोकन इंग्लिश की विशेष कक्षाएँ
5. संस्कार युक्त शिक्षा पर विशेष आग्रह
6. सुरूचिपूर्ण एवं पौष्टिक अल्पहार एवं भोजन
7. एक बड़े कक्ष में 4 छात्रों की आवास सुविधा
8. एन.सी.सी.
9. नियमित खेलकूद एवं योग कक्षाएं
10. स्नेहपूर्ण पारिवारिक वातावरण
11. शैक्षिक उन्नयन हेतु अतिरिक्त कक्षाएं
12. श्रेष्ठ परीक्षा परिणाम

विशेष

कक्षा 10वीं में 90 प्रतिशत अंक पर रु. 10,000/- एवं 94 प्रतिशत अंक पर रु. 25,000/- की शुल्क में छूट दी जायेगी।

इंजीनीयर 2652

डॉक्टर 540

सी.ए. 162

सी.एस. 130

परीक्षा परिणाम 2014-15

कक्षा-12 : विज्ञान

भैया का नाम	भौ. विज्ञान	र. विज्ञान	गणित
आशीष शर्मा	98	96	100
रवि प्रकाश	88	94	99
देवेन्द्र जांगिड	96	87	95
अंकित	87	91	100
कुशाल शर्मा	88	89	97

कक्षा-12 : वाणिज्य

भैया का नाम	लेखाशास्त्र	गणित
यश रामनानी	93	100
अक्षय	100	95 (अर्थशास्त्र)
अमन	94	88
जय कुमार	96	92

कक्षा-10

भैया का नाम	विज्ञान	गणित	संस्कृत
सुमित गौडावन	100	100	94
सूरज मीणा	98	93	92
रितिक शर्मा	98	88	93
पीताम्बर शर्मा	96	93	97
नरेश मीणा	95	90	89
जगदीश सैनी	100	85	99
आशीष	92	97	97
अमित चौहान	95	94	98

(गणित में 16 छात्रों के 90 प्रतिशत से अधिक अंक)

विद्यालय के पूर्व विद्यार्थी, हमें जिन पर गर्व है।

1.	श्री अनिल कौशिक	I.P.S. भूतपूर्व डीजीपी पंजाब पुलिस
2.	श्री आशीष आनन	I.P.S. एसीपी अंडमान
3.	डॉ. प्रवीण मित्तल	I.R.S. सहायक आयकर आयुक्त
4.	श्री शैलेन्द्र शर्मा	I.R.S. अतिरिक्त आयक आयुक्त
5.	श्री मानसिंह चूंडावत	R.J.S.
6.	श्री अमित जौहरी	R.A.S.
7.	श्री सौरभ सिंह शेखावत	भारतीय सेना में ब्रिगेडियर-एवरेस्ट विजेता
8.	श्री योगमित्र दिनकर	R.A.S.
9.	श्री कृष्ण कुमार पारीक	I.R.S. उपमहाप्रबन्धक, रेल पिरचालन-उ.प्र.
10.	श्री राजीव सिंह	I.R.S. उप महाप्रबंधक जन सूचना-उ.प. रेलवे
11.	डॉ. मनोहर अगनानी	I.A.S. मध्य प्रदेश
12.	श्री दुष्यन्त मुद्गल	I.A.S. निदेशक डाक विभाग
13.	श्री उषस्पति त्रिपाठी	R.A.S.
14.	श्री मुकुल शर्मा	R.A.S.
15.	श्री विभू कौशिक	R.A.S.
16.	श्री सुरेश यादव	R.A.S.
17.	श्री चन्दन दुबे	R.A.S.
18.	डॉ. जगत प्रकाश नरूला	R.A.S. विश्व प्रसिद्ध ह्रदय रोग विशे. अमेरिका

छात्रावास के भैयाओं की खेल क्षेत्र में उपलब्धियाँ

1.	भैया शुभम चौधरी	(नेशनल S.G.F.I. फुटबाल)	2010
2.	भैया सोमवीर सिंह	(नेशनल S.G.F.I. फुटबाल)	2010
3.	भैया सचिन शेखावत	(नेशनल S.G.F.I. पिस्टल शूटिंग)	2014
4.	भैया हेमन्त सैनी	(नेशनल S.G.F.I. पिस्टल शूटिंग)	2014
5.	भैया कोविद सोलोत	(नेशनल S.G.F.I. पिस्टल शूटिंग)	2015
6.	भैया सौरभ खटाना	(नेशनल S.G.F.I. पिस्टल शूटिंग)	2015
7.	भैया चैतन्य चौधरी	(नेशनल S.G.F.I. पिस्टल शूटिंग)	2016
8.	भैया यश दासवानी	(नेशनल S.G.F.I. पिस्टल शूटिंग)	2016
9.	भैया विकास जाट	(नेशनल S.G.F.I. रायफल शूटिंग)	2016
10.	भैया आशाराम चौधरी	(नेशनल S.G.F.I. बीच वॉलीबाल)	2016
11.	भैया कोविद सोलोत	(नेशनल S.G.F.I. बीच वॉलीबाल)	2016
12.	भैया टीनू पोसवाल	(नेशनल S.G.F.I. बीच वॉलीबाल)	2016

विशेष : विद्यालय की रस्साकस्सी की 17 वर्षीय टीम भी नैशनल खेल कर आयी है।

पिस्टल और रायफल शूटिंग के प्रशिक्षण की विशेष व्यवस्था।

छात्रावास शुल्क 54000 रु. वार्षिक

अध्यक्ष : **दामोद दास मोदी**

प्रधानाचार्य : **रामानंद चौधरी**

मुद्रक : हरिहर प्रिण्टर्स, जयपुर फोन : 0141-2600850

भारत सरकार व राज्य सरकार द्वारा केन्द्र प्रवर्तित योजना (शिक्षक शिक्षा) अन्तर्गत क्रमोन्नत संस्थान

श्री अग्रसेन स्नातकोत्तर शिक्षा महाविद्यालय सी.टी.ई.

(नैक संस्थान से 'ए' ग्रेड एवं यू.जी.सी. की 2-एफ एवं 2-बी धारा में पंजीकृत)

केशव विद्यापीठ, जामडोली, जयपुर-302 031 (राज.)

दूरभाष : 0141-2680466 (कार्यालय), 0141-2681583 (प्राचार्य/फैक्स)

वेबसाइट : www.shriagrasenpgttcollegecte.com, ई-मेल : ctejamdoli@gmail.com

संस्था अन्तर्गत संचालित विभिन्न पाठ्यक्रम

- यू.जी.सी. द्वारा स्वीकृत एवं राज. वि.वि. से सम्बद्ध दीनदयाल उपाध्याय कौशल केन्द्र के इंटीरियर डेकोरेशन, बिल्डिंग कंस्ट्रक्शन में डिप्लोमा, डिग्री कोर्स (शिक्षण निःशुल्क यू.जी.सी. द्वारा, योग्यता : +1 2 उत्तीर्ण)
- एम.एड. द्वि—वर्षीय पाठ्यक्रम (राजस्थान वि.वि. से स्थाई सम्बद्ध)
- बी.एड. द्वि—वर्षीय पाठ्यक्रम (राजस्थान वि.वि. से स्थाई सम्बद्ध)
- डी.एल.ई.डी. द्वि—वर्षीय पाठ्यक्रम (राज्य सरकार से सम्बद्ध)
- केन्द्र प्रवर्तित योजनान्तर्गत सृजित सी.टी.ई. संस्थान
- इग्नू अध्ययन केन्द्र (बी.एड., एम.एड., एम.ए. (शिक्षा) इत्यादि)

कौशल केन्द्र के प्रशिक्षणार्थियों के
रोजगार
हेतु कैम्पस प्लेसमेंट सुविधा

संस्था अन्तर्गत उपलब्ध सुविधाएँ

• छात्र एवं छात्राओं हेतु पृथक छात्रावास व्यवस्था • कम्प्यूटर प्रशिक्षण की सुविधा • पुस्तकालय सुविधा,• शैक्षिक तकनीकी प्रयोगशाला • मनोविज्ञान प्रयोगशाला, विज्ञान प्रयोगशाला • आर्ट एण्ड क्राफ्ट प्रयोगशाला • स्थापन्न प्रकोष्ठ, परामर्श प्रकोष्ठ, महिला प्रकोष्ठ • शोध एवं प्रकाशन • गणित एवं भाषा प्रयोगशाला • संस्कार केन्द्र

डॉ. बनवारी लाल नाटिया
अध्यक्ष

डॉ. राजीव सक्सेना
मंत्री

डॉ. अशोक कुमार सिड़ाना
प्राचार्य

शैक्षिक मंथन 'कर्त्तव्य पथ' विशेषांक प्रकाशन पर हार्दिक शुभकामनाएँ

राष्ट्रीय शैक्षिक महासंघ

सौराष्ट्र संभाग, गुजरात

प्रत्येक का कर्त्तव्य है कि वह अपने आदर्शों को लेकर उसे चरितार्थ करने का प्रयत्न करे। दूसरों के पास आदर्शों को लेकर चलने की अपेक्षा, जिनको वह पूरा ही नहीं कर सकता, अपने ही आदर्श का अनुसरण करना सफलता का अधिक निश्चित मार्ग है।

- स्वामी विवेकानन्द

शुभेच्छु
भाविन कुमार शरद भाई भट्ट
सौराष्ट्र संभाग संयोजक

शैक्षिक मंथन 'कर्तव्य पथ' विशेषांक के प्रकाशन पर हार्दिक शुभकामनाएँ

राजस्थान शिक्षक संघ (राष्ट्रीय) जिला जैसलमेर

राणीदान सिंह भुट्टो जिलाध्यक्ष	**नटवर व्यास** जिलामंत्री	**श्रीमती नेनू खत्री** महिला मंत्री
चन्दनसिंह राठौड़ संभाग संगठन मंत्री	**शैतान सिंह** विभाग संगठन मंत्री	**अनोपसिंह** जिला संगठन मंत्री

अनिल शर्मा सभाध्यक्ष	**प्रदीप शर्मा** कोषाध्यक्ष	**हीरालाल पालीवाल** वरिष्ठ उपाध्यक्ष	**हम्मीर सिंह सोढ़ा** उपाध्यक्ष

जिला कार्यकारिणी

उत्मााराम जाखड़, भगवान सिंह सोढ़ा, श्रीमती चंचल छंगाणी, सदीक मोहम्मद, प्रयागसिंह भाटी, अशोक कुमार दाधीच, मोहन लाल पालीवाल, अर्जुन सिंह भाटी, सुरेश जीनगर, कानसिंह परिहार, अमरसिंह तंवर, रेवन्त सिंह परिहार, श्रीमती सुधा बिस्सा, सखी मोहम्मद, प्रयागसिंह तंवर, तुलछीदास, समन्दर सिंह राठौड़

कोटा विश्वविद्यालय, कोटा

महाराव भीम सिंह मार्ग, कबीर सर्किल के पास, कोटा (राजस्थान) -324005

(वेबसाइट : www.uok.ac.in)

(विश्वविद्यालय अनुदान आयोग द्वारा 2 (f) व 12 (B) प्रदत राज्यस्तरीय विश्वविद्यालय)

अखिल भारतीय स्तर पर एनआईआरएफ, मानव संसाधन विकास मंत्रालय,
भारत सरकार द्वारा 78 वीं रैंक प्राप्त विश्वविद्यालय

उच्च शिक्षा के क्षेत्र में सर्वोतम व उत्कृष्ट परिणाम प्रदान करने वाला विश्वविद्यालय

विश्वविद्यालय परिसर में संचालित स्नातक व स्नातकोत्तर पाठ्यक्रम

विज्ञान संकाय – एम.एससी. (रसायन विज्ञान, औद्योगिक रसायन विज्ञान, भौतिक विज्ञान, प्राणी विज्ञान, वनस्पति विज्ञान, वन्यजीव विज्ञान, गणित व भूगोल), एम.सी.ए., एकीकृत बी.एस.सी.-एम.एससी. (भौतिक विज्ञान) व एम.टेक. (सौर ऊर्जा), **वाणिज्य एवं प्रबंधन संकाय** – एम.बी.ए., एम.बी.ए. (अंतरराष्ट्रीय व्यापार) व एम.कॉम. (लेखा और वित्त), **सामाजिक विज्ञान संकाय** – एम.ए. (भूगोल, विकास अध्ययन व विरासत पर्यटन, संग्रहालय विज्ञान एवं पुरातत्व) व एम.एस.डब्लू, **शिक्षा संकाय** – एम.पी.एड. तथा **विधि संकाय** – एल.एल.एम.।

विश्वविद्यालय अधिकार क्षेत्र में संचालित पी.एचडी. पाठ्यक्रम

विज्ञान संकाय – रसायन विज्ञान, भौतिक विज्ञान, प्राणी विज्ञान, वनस्पति विज्ञान, गणित, संगणक विज्ञान व पुस्तकालय सूचना विज्ञान, **कला संकाय** – हिन्दी, अंग्रेजी, संस्कृत, उर्दू, संगीत, चित्रांकन और रंगाई, **सामाजिक विज्ञान संकाय** – समाजशास्त्र, राजनीति विज्ञान, लोक प्रशासन, अर्थशास्त्र, इतिहास, भूगोल व गृह विज्ञान, **वाणिज्य एवं प्रबंधन संकाय** – ईएएफएम्, वाणिज्य एवं प्रबंधन, बिजनेस एडमिनिस्ट्रेशन एंड मैनेजमेंट, एबीएसटी, शिक्षा संकाय – शिक्षा तथा **विधि संकाय**– विधि।

महाप्रज्ञ कॉलेज, आसीन्द

ADMISSION OPEN

BCA | BBA | B.Com | BA

B.Sc. (Bio/Maths)

Acharya Shri Mahapragya Institute of Excellence

(Affiliated to MDS University, Ajmer & Approved by Govt. of Rajasthan)

Mahapragya Nagar, Asind, Distt. Bhilwara (Raj.) Ph. 01480-221101, 02,03 Cell : +91-98296-25844

With Best Wishes

वक्त कम है जितना दम है लगा दो...
कुछ लोगों को मैं जगाता हूँ...
कुछ लोगों को तुम जगा दो...

Adarsh Teachers Training College

Church Road, Deoli (Distt. Tonk)

RANGE
CERAMIC
digital wall tiles
300 x 600 mm
300 x 900 mm
दुनिया आपको उस समय तक हरा नहीं सकती,
जब तक आप अपने आपसे हार नहीं जाते।
RANGE CERAMIC PVT. LTD.
Opp. CNG pump, Jetpar Road, At. Bela, Morbi - 363642. (Guj) INDIA.
www.rangeceramic.com
E-mail : info@rangeceramic.com
MO :- 9978604040 , 9978644040

Estd. Yr. 2000

Excellence in Education

ARYA Group of Colleges

Kukas / Omaxe City, Jaipur

(All Colleges approved by AICTE and Affiliated to RTU, PCI)

ASSURED PLACEMENT

B.Tech. • M.Tech. • MBA • B.Pharma • M. Pharma

1800-102-1044 • www.aryacollege.org

ARYA 1st MAIN CAMPUS

ARYA	Institute of Engg. & Technology	(AIET)
ARYA	Institute of Engg. Tech. & Mgmt.	(AIETM)
ARYA	College of Engg. & Research Centre	(ACERC)
ARYA	College of Pharmacy	(ACP)

Highest Package of 25 Lacs for 2015-16 Batch

ARYA IS BEST

- Best & Biggest Colleges of North India
- 70+ On Campus Placement Every Year
- Best Placement Award From Last 5 Years
- 10000+ Students Placed On Campus
- Highest No. of Industrial Alliances
- 2500+ Computers for Online Exams
- 15000+ Strong & Successful Alumni
- Best RTU Results for Last 15 years
- 120 mbps Wi-fi Campus & Hostel
- Winner of Maximum Awards

B.Tech ECE • IT • EE • ME • CE • CS

785+ Students Placed of 2016 Batch

Our Faculty - Our Strength

City Office : 409 A, Surya Nagar, Near Ridhi Sidhi, Gopalpura Bypass, Jaipur • 09001992256, 09001990992

Campus @ Kukas	SP-40, RIICO Ind. Area, Kukas, Jaipur Toll Free : 1800-102-1044 Tel. : 0141-5148801-03	Campus @ Ajmer Road	F-29, Omaxe City, Ajmer Road, Jaipur Tel. : 0141-5153404, 5153406 Dr. Manoj Kumar : 08432100111

India's First DEFENCE ACADEMY based
on the pattern of SAINIK SCHOOL
5th to 12th Class (ENGLISH MEDIUM)
SCHOOL+COMPETITION
NDA
IIT/AIEEE
AIPMT/AIIMS
NTSE
NSO/IMO
KVPY/OLYMPIAD
C.A.
C.S.
CLAT
Hi, this is helpline number. I am available for career counseling. If you want to go to Army, Navy, Air-Force, Police, NDA or if your are interested in SSC, Banking services. For information and queries please contact me.
Contact numbers are :
88751-66000
88750-66000
Entrance Gate
SKD Campus
BOYS' Hostel
GIRLS' Hostel
ENGLISH MEDIUM
Pre-Admission Exam on 15th & 30th Date of Every Month
FULLY RESIDENTIAL
-: SALIENT FEATURES :-
RAJASTHAN's FIRST BOTANICAL GARDEN
HOSTEL FACILITY WITH OWN DAIRY & FARM
WELL EQUIPPED SCIENCE & COMPUTER LABS
GOOD DAY DEFENCE SCHOOL
on the pattern of SAINIK SCHOOL
Khushal Nagar, Suratgarh Road, Hanumangarh Junction (Rajasthan)
CONTACT : 088751-66000, 088750-66000
e-mail : skdeducity@gmail.com Website : www.skdcampus.com

शैक्षिक मंथन 'कर्त्तव्य पथ' विशेषांक के प्रकाशन पर हार्दिक शुभकामनाएँ

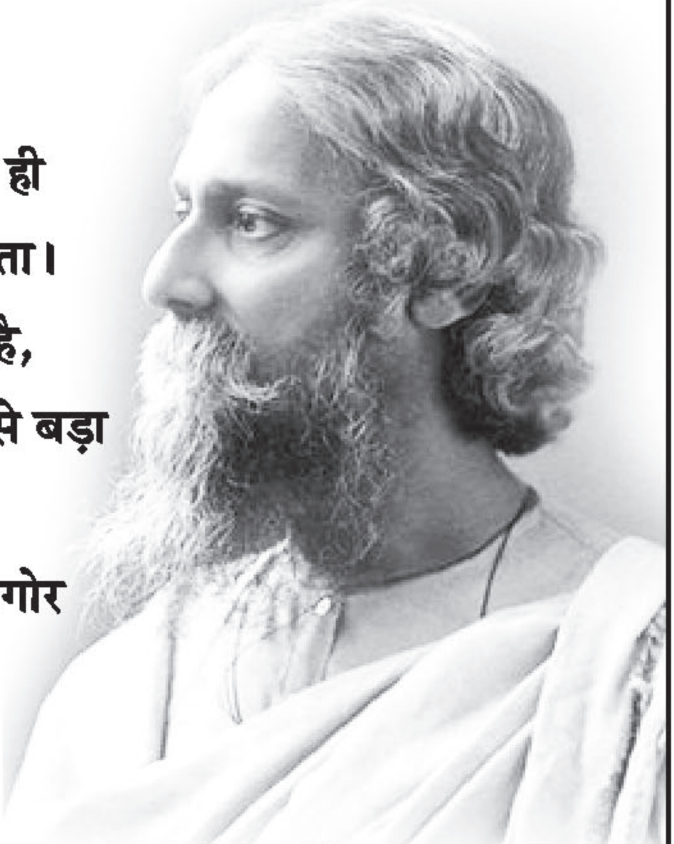

कुछ न कुछ कर बैठने को ही
कर्त्तव्य नहीं कहा जा सकता।
कोई समय ऐसा भी होता है,
जब कुछ न करना ही सबसे बड़ा
कर्त्तव्य माना जाता है।

– रविन्द्रनाथ टैगोर

सैय्यद यास्मीन

वरिष्ठ अध्यापिका विज्ञान
राजकीय महाविद्यालय दानवाव,
तहसील आबूरोड, जिला सिरोही (राजस्थान)

स्वच्छ भारत ❀ स्वस्थ भारत

R.G.NO.G.6532/2010

राष्ट्रीय शैक्षिक महासंघ, गुजरात

गुजरात के सभी प्राथमिक, माध्यमिक शिक्षकों की ओर से
शैक्षिक मंथन 'कर्त्तव्य पथ' विशेषांक के प्रकाशन पर

हार्दिक शुभेच्छा

भवदीय

घनश्याम भाई पटेल
अध्यक्ष

भीखा भाई पटेल
महामंत्री

रतु भाई गोल
संगठन मंत्री

एवं समस्त पदाधिकारी, गुजरात

पंजीयन क्र/126/जोध/95–96

ॐ

☎0291–2757941

विद्या भारती शिक्षा संस्थान, जोधपुर

E-Mail – vbssjod@rediffmail .com

'श्रुतम्' कमला नेहरू नगर, जोधपुर

भारतीय संस्कृति के अनुरूप श्रेष्ठ संस्कारों के साथ उत्तम शिक्षा देने के लिए प्रयासरत

बोर्ड परीक्षा परिणाम 2016

12 वीं बोर्ड परीक्षा परिणाम – 2016

क्र.	वर्ग	कुल विद्यालय	कुल छात्र	प्रथम	द्वितीय	तृतीय	राज्य मेरिट	जिला
1-	विज्ञान	13	554	343	173	–	–	1
2-	वाणिज्य	16	443	248	166	10	–	6
3-	कला	11	422	319	95	–	–	3
	योग		**1419**	**910**	**434**	**10**	--	**10**

10 वीं बोर्ड परीक्षा परिणाम – 2016

क्र.	जिला	कुल विद्यालय	कुल छात्र	प्रथम	द्वितीय	तृतीय	पूरक	अनु.	जिला वरीयता	राज्य वरीयता
1	सिरोही	13	643	375	215	14	24	15	3	----
2	बाली	6	261	133	99	16	6	7	3	----
3	पाली	10	380	247	100	6	15	12	2	----
4	जालोर	9	432	253	133	16	17	13	1	1
5	बालोतरा	4	252	153	83	5	4	7	1	----
6	बाड़मेर	10	385	273	90	5	9	8	4	----
7	जैसलमेर	9	299	195	81	6	14	3	7	----
8	जोधपुर जिला	12	727	481	200	19	11	16	1	----
9	जोधपुर महानगर	11	554	359	154	14	11	16	1	----
10	नागौर	8	467	321	125	12	4	5	1	----
11	डीडवाना	5	198	127	59	2	5	5	----	----
12	बीकानेर	11	585	401	147	9	17	11	8	----
13	श्रीगंगानगर	7	218	124	74	3	6	11	3	----
14	हनुमानगढ़	2	75	40	19	4	4	8	2	1
	योग	117	5476	3482	1579	131	147	137	37	2

राज्य स्तर पर कक्षा दशमी में हनुमानगढ़ जिले की बहिन प्रियंका टाक ने 5 वाँ स्थान तथा जालोर जिले के भैया मोहित नागर ने 10 वाँ स्थान प्राप्त कर तथा जिला वरीयता सूची में विभिन्न जिलों में कक्षा द्वादशी में 10 भैया–बहिनों एवं कक्षा दशम् में 37 भैया–बहिनों ने स्थान प्राप्त कर संस्थान का नाम रोशन किया।

प्रान्त के सभी प्रधानाचार्यों, आचार्यों, समिति, अभिभावक एवं मेधावी विद्यार्थियों को हार्दिक बधाई।

डॉ.श्रवण कुमार मोदी
अध्यक्ष
विद्या भारती शिक्षा संस्थान, जोधपुर

अमृतलाल दैया
मंत्री
विद्या भारती शिक्षा संस्थान, जोधपुर

माध्यमिक शिक्षा बोर्ड, राजस्थान, अजमेर

वसुन्धरा राजे सिन्धिया
माननीय मुख्यमंत्री,
राजस्थान सरकार

प्रो. वासुदेव देवनानी
माननीय शिक्षा राज्य मंत्री,
राजस्थान सरकार

प्रो. बी.एल. चौधरी
अध्यक्ष
मा.शि.बो.रा., अजमेर

राजस्थान प्रदेश के विद्यार्थियों के लिए अनुपम सौगात

विद्यार्थी सेवा केन्द्र

राज्य में कार्यरत विद्यार्थी सेवा केन्द्र

संभाग	स्थान	दूरभाष न.
अजमेर	माध्यमिक शिक्षा बोर्ड राजस्थान, अजमेर	0145–2632866–73
भरतपुर	राजकीय मास्टर आदित्येन्द्र उ.मा. विद्यालय, भरतपुर	05644–228889
जयपुर	I राजीव गांधी विद्यार्थी सेवा केन्द्र, शिक्षा संकुल जे.एल.एन. मार्ग, जयपुर	0141–2708807
	II राजकीय महारानी बालिका उ.मा. विद्यालय, मीरा मार्ग, बनीपार्क, जयपुर	0141–2207525
कोटा	राजकीय मल्टीपरज उ.मा. विद्यालय, गुमानपुरा, कोटा	0744–2391526
उदयपुर	राजकीय गुरू गोविन्दसिंह उ.मा. विद्यालय, उदयपुर	0294–2525320
जोधपुर	राजकीय बालिका उ.मा. विद्यालय, महामंदिर, लाल मैदान, आकाशवाणी सेन्टर के सामने, जोधपुर	0291–2754172
चुरू	राजकीय बागला उ.मा. विद्यालय, चुरू	01562–253314
बीकानेर	राजकीय सार्दुल उ.मा. विद्यालय, कोटगेट, बीकानेर	0151–2544376
श्रीगंगानगर	राजकीय उच्च माध्यमिक विद्यालय, श्रीगंगानगर	9414500351
नागौर	सेठ किशनलाल काकरिया रा. उ.मा.विद्यालय, नागौर	
झालावाड़	राजकीय उ.मा.विद्यालय, झालावाड़	
बांसवाड़ा	राजकीय उ.मा. विद्यालय, बांसवाड़ा	

उपलब्ध सुविधाएं :–

- प्रथम चरण में वर्ष 2001 से वर्ष 2016 तक के सैकण्डरी और सीनियर सैकण्डरी परीक्षाओं की प्रतिलिपि अंकतालिका और प्रव्रजन प्रमाण–पत्र उसी दिन आवेदन के साथ ही जारी किये जायेंगे।
- राज्य के किसी भी भाग में निवास करने वाला बोर्ड का विद्यार्थी राज्य के किसी भी विद्यार्थी सेवा केन्द्र से बोर्ड प्रलेख प्राप्त कर सकेगा।
- द्वितीय चरण में परीक्षा प्रमाण–पत्रों के साथ–साथ वर्ष 1971 से अन्तिम बोर्ड परीक्षा तक के सभी प्रलेख भी उपलब्ध हो सकेंगे।
- उक्त सुविधाएं जिला स्तर पर मिलने के कारण विद्यार्थियों को प्रलेखों के लिए अजमेर स्थित बोर्ड केन्द्रीय कार्यालय नहीं आना पड़ेगा। इससे उन्हें समय, श्रम व आर्थिक बचत होगी।

विस्तृत जानकारी के लिये बोर्ड की वेबसाइट www.rajeduboard.nic.in देखें।

शैक्षिक मंथन 'कर्त्तव्य पथ' विशेषांक के प्रकाशन पर

हार्दिक शुभकामनाएँ

उद्योगिनं पुरुषसिंहमुपैति लक्ष्मी

पंचतन्त्र 2/137

कर्मशील एवं पुरुषों में सिंह के समान व्यक्ति
के पास समृद्धि स्वयं आती है।

समाराम गरासिया

विधायक

आबू – पिंडवाड़ा, राजस्थान

मुकाम पोस्ट वरली, तहसील पिंडवाड़ा, जिला सिरोही (राजस्थान)

मो. 9414153012, 9799389912

केशव विद्यापीठ समिति

जामडोली, जयपुर, राजस्थान, टेलीफोन न. : 0141-2680344, 2680719
Email id - info@keshavvidyapeeth.com, web - www.keshavvidyapeeth.com

शिक्षा सेवा के माध्यम से शाश्वत जीवन मूल्यों द्वारा व्यक्ति निर्माण हेतु समर्पित संस्थान केशव विद्यापीठ की स्थापना राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के आद्य सरसंघचालक डॉ. केशवराव बलिराम हेडगेवार की पुण्य स्मृति में उनकी जन्मशती के अवसर पर 18 मार्च 1988 को जयपुर से 10 कि.मी दूर की गई। हमारा लक्ष्य शिक्षा के माध्यम से शाश्वत मूल्यों की स्थापना कर युवा पीढ़ी को आत्मनिर्भर बनाना एवं समाज, राष्ट्र कार्य हेतु प्रेरित करना है। इस उद्देश्य की पूर्ति हेतु विभिन्न संस्थानों का संचालन हो रहा है। केन्द्रीय समिति के मार्गदर्शन में विभिन्न संस्थानों की प्रबंध समितियाँ अपने लक्ष्य की पूर्ति हेतु प्रयासरत हैं।

केशव विद्यापीठ जामडोली, जयपुर, कार्यकारिणी समिति (2015-2018)

संरक्षक : श्री रामलक्ष्मण गुप्ता
अध्यक्ष : डॉ. विमल प्रसाद अग्रवाल
सचिव : इ. राजेन्द्र प्रसाद शर्मा
उपाध्यक्ष : श्रीमती आशा गोलछा
कोषाध्यक्ष : सी.ए. अशोक ताम्बी
सदस्य : श्री शंकरलाल अग्रवाल, श्री हरिश्वर छीपा, श्री नरेश सौंखिया
सहवरित सदस्य : श्री अशोक डीडवानिया, श्री राममोहन गर्ग, श्री प्रदीप सिंह चौहान, श्री अजीत माण्डन
पदेन सदस्य : श्री शिव प्रसाद, श्री भरतराम कुम्हार, श्री रामेश्वर खण्डेलवाल, श्री सुरेश कुमार वधवा
स्थाई आमंत्रित : श्री दुर्गादास जी, श्री प्रकाश चन्द्र जी, श्री निम्बाराम जी एवं केशव विद्यापीठ समिति द्वारा संचालित विभिन्न संस्थाओं के अध्यक्ष, मंत्री, विश्वविद्यालय प्रतिनिधि, जिला शिक्षा अधिकारी जयपुर

शंकरलाल धानुका उच्च माध्यमिक आदर्श विद्या मंदिर
☎ 2680680

अध्यक्ष : श्री सुरेश उपाध्याय
मंत्री : श्री विश्वम्भर दयाल शर्मा

कक्षा 6 से 12 तक विज्ञान एवं वाणिज्य संकाय का पूर्ण आवासीय विद्यालय जहाँ गुरुकुल पद्धति पर आधारित आधुनिक शिक्षा एवं संस्कार युक्त स्वस्थ वातावरण द्वारा बालक का सम्पूर्ण विकास किया जाता है। ज्ञान कौशल, शारीरिक दक्षता, भाषा, कला, केरियर मार्गदर्शन द्वारा बालक को विश्वस्तरीय स्पर्धा के योग्य बनाया जाता है। प्रतियोगी परीक्षा हेतु तैयारी की व्यवस्था है।

दामोदर दास डालमिया उच्च माध्यमिक आदर्श विद्या मंदिर
☎ 2682330

अध्यक्ष : श्री देवेन्द कुमार शर्मा
आधुनिक शिशुवाटिका से कक्षा 12वीं तक का विद्यालय
मंत्री : श्री दिलीप गोयल

ब्रह्मचारी श्री रामानुजाचार्य कन्या उच्च माध्यमिक विद्यालय
☎ 2680455

अध्यक्ष : श्री सुरेश चन्द्र बंसल
कक्षा 3 से 12 तक कला, वाणिज्य संकाय को श्रेष्ठ कन्या विद्यालय
मंत्री : श्रीमती सीमा जुल्का

KRISHNA GLOBAL SCHOOL
☎ 992976750

Chairman : Shri Ram Narayan Garg
Play Group to Class V- An English Medium Co-education School
Secretary : Shri Harsahay Saini

देवीदत्त डालमिया शारीरिक शिक्षा महाविद्यालय
☎ 2680076

अध्यक्ष : श्री प्रकाश नारायण पारीक
संस्कार युक्त शारीरिक शिक्षा हेतु देश का श्रेष्ठ संस्थान
मंत्री : श्री हीरानंद कटारिया

श्री अग्रसेन स्नातकोत्तर शिक्षा महाविद्यालय, सी.टी.ई
दीनदयाल उपाध्याय कौशल केन्द्र भारत सरकार द्वारा प्राप्त
श्री अग्रसेन शिक्षण प्रशिक्षण विद्यालय
☎ 2680466

अध्यक्ष : श्री बनवारी लाल नाटिया
श्रेष्ठ शिक्षक निर्माण एवं शोध कार्य में देश का प्रमुख संस्थान
मंत्री : श्री राजीव सक्सेना

भगवानलाल रामलाल रावत इण्डोस्विच चैरिटेबल ट्रस्ट अस्पताल
☎ 2680209

अध्यक्ष : डॉ. अशोक कुमार धूत
नर सेवा - नारायण सेवा के भाव से सेवारत
मंत्री : श्री रामवतार वैद्य